श्रीमद् आचार्य नेमिचन्द्र
सिद्धान्तचक्रवर्ति विरचित

लब्धिसार

प्रथमोपशम सम्यक्त्व अधिकार

Presentation Developed By: Smt Sarika Vikas Chhabra

पडिसमयमसंखगुणं, दव्वं संकमदि अप्पसत्थाणं ।
बंधुज्झियपयडीणं, बंधंतसजादिपयडीसु ॥75॥

- अन्वयार्थः- (अप्पसत्थाणं बंधुज्झियपयडीणं) बंधरहित अप्रशस्त प्रकृतियों का (दव्वं) द्रव्य (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (असंखगुणं) असंख्यात गुणितरूप से (बंधंतसजादिपयडीसु) बांधी जाने वाली स्वजातीय प्रकृतियों में (संकमदि) संक्रमित करता है ॥75॥

www.JainKosh.org

गुण संक्रमण

जिनका बंध नहीं हो रहा, सत्ता में स्थित ऐसी पाप प्रकृतियों का

प्रतिसमय

असंख्यात गुणा

वर्तमान में बंधने वाली अन्य प्रकृति रूप होना

गुण-संक्रमण कहलाता है ।

www.JainKosh.org

गुण संक्रमण

संक्रमण याने एक कर्म का अन्य कर्मरूप होना

किन कर्मों का ?

- अप्रशस्त कर्मों का

बंधने वालों का ?

- नहीं, सत्ता के कर्मों का

कब ?

- प्रतिसमय

कितना ?

- पहले समय से अगले समय असंख्यातगुणा

www.JainKosh.org

गुणसंक्रमण - विशेष

प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति हेतु होने वाले अपूर्वकरण में गुणसंक्रमण नहीं पाया जाता है ।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होने पर प्रथम समय से शुरुआत करके विध्यात संक्रमण प्राप्त होने के पूर्व समय तक मिथ्यात्व का गुणसंक्रमण होता है । इससे मिथ्यात्व के द्रव्य को सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूप संक्रमित करता है।

अपने पूर्व स्वरूप को छोड़कर दूसरे स्वरूप को ग्रहण करता है – इस प्रकार संक्रमण का अर्थ है।

एवंविहसंकमणं, पढमकसायाण मिच्छमिस्साणं । संजोजणखवणाए, इदरेसिं उभयसेढिम्मि ॥76॥

- अन्वयार्थ :- (एवंविहसंकमणं) इस प्रकार का संक्रमण (पढमकसायाण) प्रथम अनन्तानुबन्धी कषाय का (मिच्छमिस्साणं) मिथ्यात्व और मिश्र प्रकृति का क्रमशः (संजोजणखवणाए) विसंयोजन के काल में और क्षपणा के काल में होता है।
- (इदरेसिं) शेष प्रकृतियों का संक्रमण (उभयसेढिम्मि) दोनों श्रेणियों में (उपशम और क्षपकश्रेणि में) होता है ॥76॥

www.JainKosh.org

गुणसंक्रमण - विशेष

गुणसंक्रमण अपूर्वकरण का आवश्यक है । परंतु प्रत्येक अपूर्वकरण में गुणसंक्रमण नहीं होता तथा प्रत्येक अपूर्वकरण में हर प्रकृति का गुणसंक्रमण नहीं होता ।

विवक्षित अपूर्वकरण में विवक्षित प्रकृतियों का ही गुणसंक्रमण होता है ।

जैसे गुणश्रेणी निर्जरा, कांडकघात आदि आवश्यक सत्त्व स्थित सर्व योग्य प्रकृतियों के होते हैं, वैसे प्रत्येक अपूर्वकरण में प्रत्येक प्रकृति का गुणसंक्रमण नहीं होता है ।

किस प्रकृति का कहाँ गुणसंक्रमण होता है – यह यहाँ नियम बताया है ।

किसका गुणसंक्रमण अपूर्वकरण के प्रथम समय से होता है?

प्रकृति	गुणसंक्रमण का समय
अनन्तानुबन्धी-4	विसंयोजना में
मिथ्यात्व, मिश्र	दर्शन मोह की क्षपणा में
गुण संक्रमण की शेष प्रकृतियाँ	उपशम व क्षपक श्रेणी में

www.JainKosh.org

पढमं अवरवरट्ठिदिखंडं पल्लस्स संखभागं तु । सायरपुधत्तमेत्तं, इदि संखसहस्सखंडाणि ॥77॥

- अन्वयार्थः- (पढमं अवरवरट्ठिदिखंडं) प्रथम जघन्य स्थितिकांडक और उत्कृष्ट स्थितिकांडक क्रम से (पल्लस्स संखभागं तु) पल्य का संख्यातवाँ भाग और (सायरपुधत्तमेत्तं) सागर पृथक्त्व मात्र होता है।
- (इदि) इस प्रकार (संखसहस्सखंडाणि) संख्यात हजार स्थितिकांडक होते हैं ॥77॥

www.JainKosh.org

स्थिति कांडक घात

सत्ता में स्थित

समस्त कर्मों की कुछ स्थिति

हर अंतर्मुहूर्त में नष्ट करना

स्थितिकांडक घात कहलाता है ।

www.JainKosh.org

स्थितिकांडक घात कैसे होता है?

जितनी स्थिति नाश करनी है, अग्र भाग के उतने स्थिति के निषेकों को नीचे की स्थिति में दिया जाता है ।

एक अंतर्मुहूर्त में सारे निषेकों को नीचे देकर ऊपर की स्थिति समाप्त हो जाती है ।

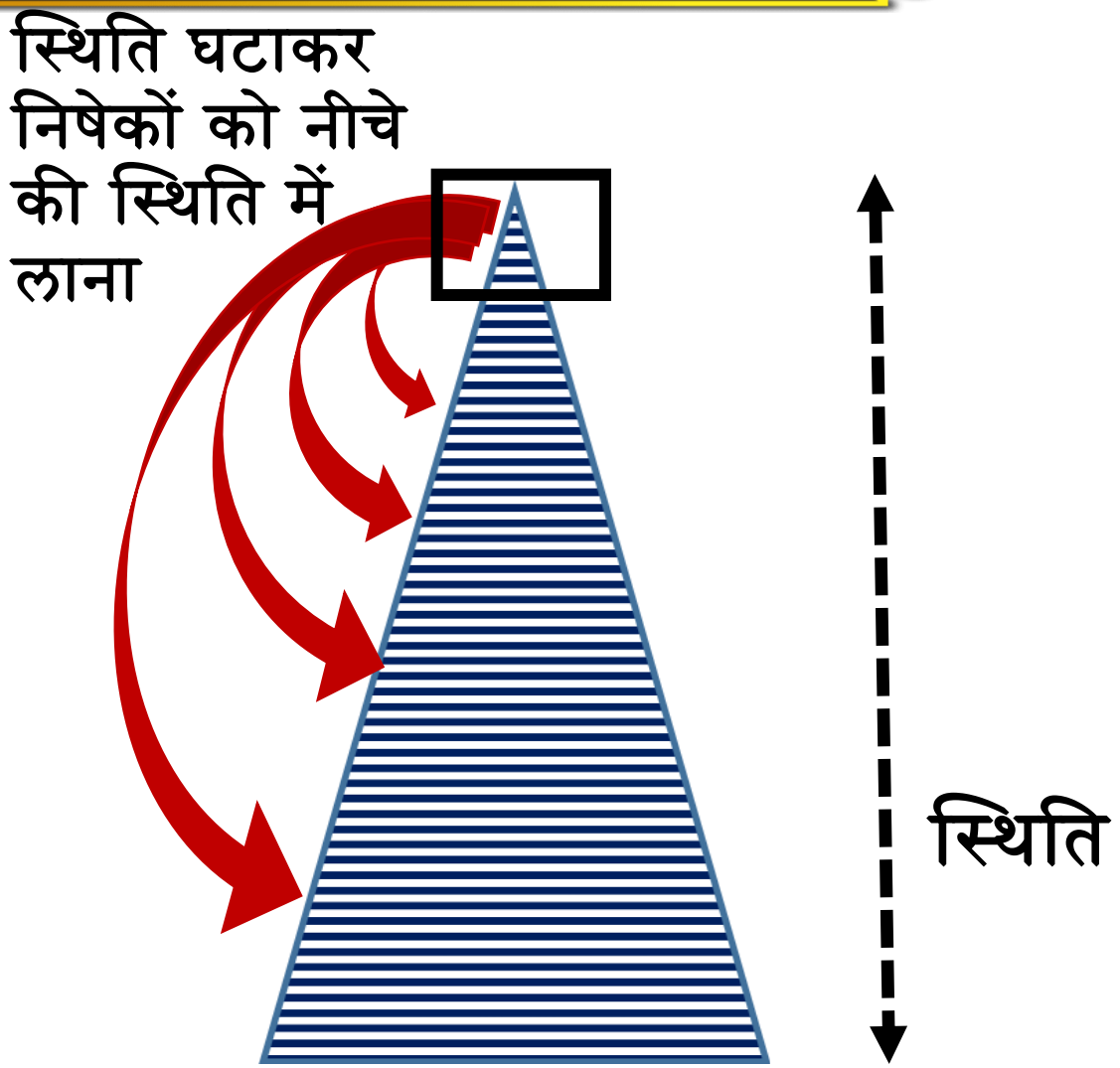

स्थिति काण्डकघात

उदाहरण- मानाकि स्थिति-सत्त्व = 10000 वर्ष;
स्थितिकांडक आयाम = 5 वर्ष

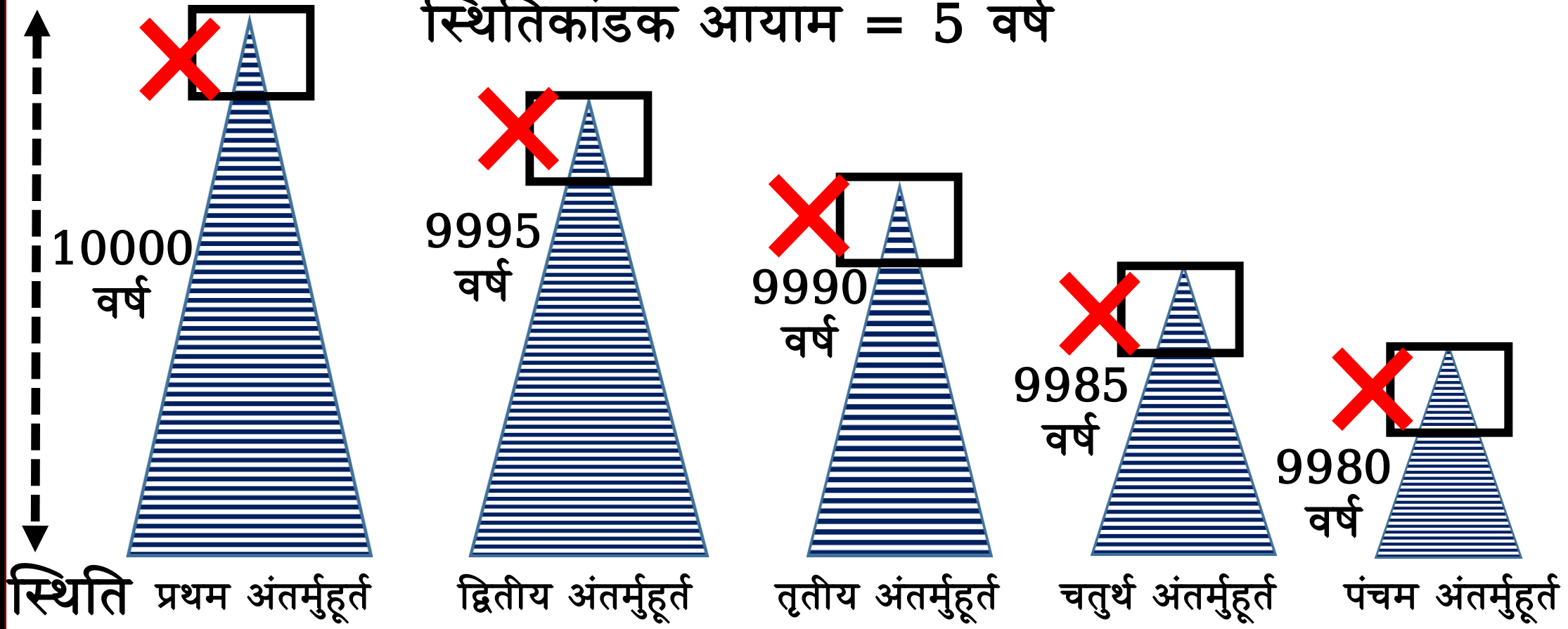

स्थिति काण्डकघात - परिभाषायें

स्थिति कांडकोत्कीरण काल

- जितना समय एक कांडक की स्थिति को घातने में लगता है, उसे स्थितिकांडकोत्कीरण काल कहते हैं ।
- यह अंतर्मुहूर्त प्रमाण होता है ।

स्थितिकांडक आयाम

- जितनी स्थिति घात के लिए ग्रहण की जाती है, उसे स्थितिकांडक आयाम कहते है ।
- जैसे जघन्य कांडक-आयाम $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ है, उत्कृष्ट कांडक-आयाम सागर पृथक्त्व है ।

स्थिति काण्डकघात - विशेष

एक स्थितिखण्डन में अन्तर्मुहूर्त काल लगता है ।

आयु को छोड़कर शेष सारे कर्मों की स्थिति का खण्डन (घात) किया जाता है ।

एक करण में संख्यात हजार बार स्थितिकांडक घात होते हैं ।

ऐसे स्थितिकांडक घात के द्वारा स्थिति-सत्त्व अपूर्वकरण के प्रारंभ से अंत में संख्यात गुणा कम हो जाता है ।

www.JainKosh.org

जघन्य स्थितिकांडक आयाम	उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक आयाम
पल्य / संख्यात	सागरोपम पृथक्त्वमात्र (7-8 सा)

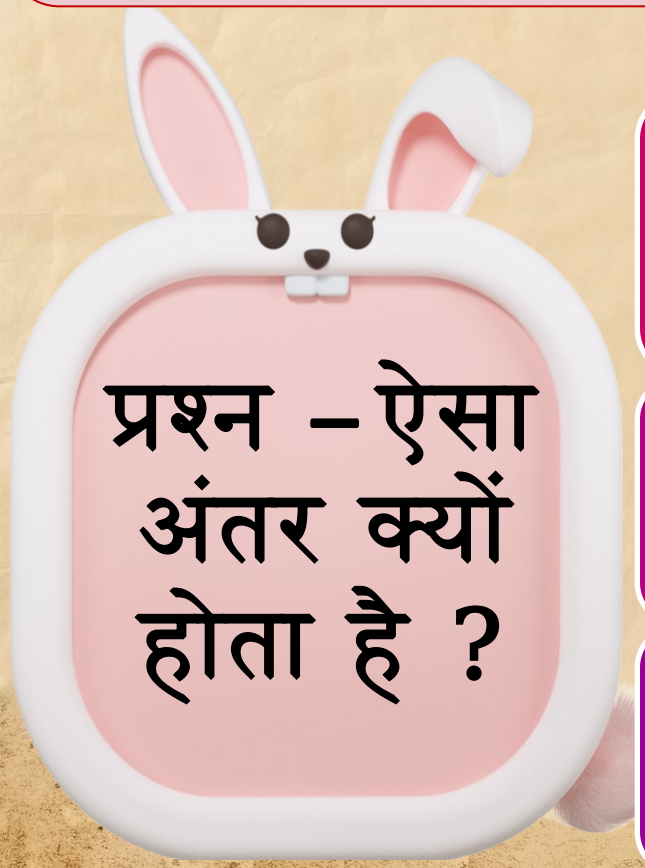

प्रश्न – ऐसा अंतर क्यों होता है ?

उत्तर – जीवों के स्थिति-सत्त्व में भिन्नता होने के कारण कांडक भी छोटा-बड़ा होता है ।

यदि स्थिति-सत्त्व अधिक है, तो कांडक भी बड़ा होगा ।

यदि स्थिति-सत्त्व कम है, तो कांडक छोटा होगा ।

प्रश्न – परंतु अध:प्रवृत्तकरण से ही सभी जीवों का स्थितिसत्त्व अंत:कोटाकोटी सागर प्रमाण है । फिर भिन्न-भिन्न सत्त्व कैसे संभव है ?

उत्तर – अंत:कोटाकोटी सागर के असंख्यात प्रकार हैं । इसलिए अंत:कोटाकोटी होने पर भी सबका एक जैसा अंत:कोटाकोटी सागर प्रमाण सत्त्व नहीं है । किसी का जघन्य (यहाँ के योग्य) अंत:कोटाकोटी सागर सत्त्व है, किसी के उत्कृष्ट अंत:कोटाकोटी सागर सत्त्व है ।

कोई जीव पूर्व में ही विशुद्धि के कारण कम स्थितिबंध करता हुआ हीन सत्त्व वाला था । कोई अन्य जीव संक्लेश के कारण अधिक स्थितिबंध करता हुआ अधिक सत्त्व वाला था । इन जीवों को अपूर्वकरण की प्राप्ति होने पर भिन्न सत्त्व के कारण भिन्न कांडक होते हैं ।

कांडक के प्रकार

स्थितियों के प्रकार असंख्यात हैं, और कांडक के प्रकार भी असंख्यात हैं ।

संभव स्थितियाँ = जघन्य अंत:कोटीकोटी सागर से उत्कृष्ट अंत:कोटाकोटी सागर

= संख्यात सागर = संख्यात पल्य

सर्व कांडक= उत्कृष्ट कांडक – जघन्य कांडक + 1

सागर पृथकत्व – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ + 1

संख्यात पल्य – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ + 1

$\frac{\text{संख्यात पल्य} \times \text{संख्यात}}{\text{संख्यात}} - \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}} + 1$

$\frac{\text{संख्यात पल्य} \times \text{संख्यात} - \text{पल्य}}{\text{संख्यात}} + 1$

$\frac{\text{पल्य} \times (\text{संख्यात} \times \text{संख्यात} - 1)}{\text{संख्यात}} + 1$

संदृष्टि में – $\frac{\text{प}}{2} \mid (22 - 1) + 1$

ये असंख्यात प्रकार के कांडक हैं ।

अनेक स्थितियों के लिए 1 कांडक

अनेकों प्रकार की स्थिति के लिये एक ही प्रकार का कांडक होता है। वह इस प्रकार से –

यदि $\frac{\text{पल्य}\times(\text{संख्यात}\times\text{संख्यात}-1)}{\text{संख्यात}}$ + 1 कांडक संख्यात पल्य प्रमाण स्थिति के लिये होते हैं,

तो 1 कांडक कितनी स्थिति के लिये होता है ?

$$\frac{\text{संख्यात पल्य}}{\frac{\text{पल्य}\times(\text{संख्यात}\times\text{संख्यात}-1)}{\text{संख्यात}}+1} = \text{संख्यात}$$

अर्थात् संख्यात स्थितियों के लिये एक प्रकार का कांडक होता है ।

उदाहरण

जघन्य स्थिति = 50 समय, उत्कृष्ट स्थिति = 64 समय ।

तो स्थितियों के प्रकार-

= उत्कृष्ट स्थिति – जघन्य स्थिति + 1

= 64 – 50 + 1 = 15

कांडक का आयाम

- जघन्य कांडक का आयाम = 5 समय
- उत्कृष्ट कांडक का आयाम = 9 समय

कांडक के प्रकार

= उत्कृष्ट कांडक – जघन्य कांडक + 1

= 9 – 5 + 1 = 5

यदि 5 कांडक हैं 15 स्थितियों के लिए, तो 1 कांडक कितनी स्थिति के लिए होगा ?

- $\frac{15}{5} \times 1 = 3$

अर्थात् 1 कांडक का विकल्प 3 स्थिति के भेदों के लिए होगा ।

कांडक के प्रकार = 5

स्थिति भेद	कांडक का आयाम
50	5
51	
52	

स्थिति भेद	कांडक का आयाम
53	6
54	
55	

स्थिति भेद	कांडक का आयाम
56	7
57	
58	

स्थिति भेद	कांडक का आयाम
59	8
60	
61	

स्थिति भेद	कांडक का आयाम
62	9
63	
64	

- इसी प्रकार वास्तविक गणित में संख्यातों प्रकार की स्थिति के लिये कांडक का एक प्रकार होता है ।
- अगली संख्यातों प्रकार की स्थिति के लिये अगला एक कांडक होता है ।
- ऐसे उत्कृष्ट कांडक तक जानना चाहिए ।

आउगवज्जाणं ठिदिघादो पढमादु चरिमठिदिसत्तो ।
ठिदिबंधो य अपुव्वे, होदि हु संखेज्जगुणहीणो ॥78॥

- अन्वयार्थ :- (अपुव्वे) अपूर्वकरण में (आउगवज्जाणं) आयु को छोड़कर शेष कर्मों का (पढमादु) प्रथम से (प्रथम स्थितिघात, स्थितिसत्त्व व स्थितिबंध से) (चरिमठिदिसत्तो ठिदिघादो य ठिदिबंधो) अंतिम स्थितिसत्त्व, स्थितिघात और स्थितिबंध (संखेज्जगुणहीणो) संख्यातगुणा कम (होदि हु) होता है ॥78॥

www.JainKosh.org

अपूर्वकरण के प्रारंभ एवं अंत में पाया जाने वाला स्थितिघात, स्थितिसत्त्व, स्थितिबंध

	प्रारंभ में	अंत में
कांडक आयाम (स्थितिघात)	$\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$	$\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात} \times \text{संख्यात}}$
स्थिति-सत्त्व	अंत:कोड़ाकोड़ी सागर	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात}}$
स्थिति बंध	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात}}$	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात} \times \text{संख्यात}}$

नोट – यह सब आयु को छोड़कर शेष 7 कर्मों में होता है ।

स्थिति बंधापसरण के कारण स्थितिबंध घटता हुआ संख्यात गुणा हीन हो गया है ।

स्थितिकांडकघात के कारण स्थितिसत्त्व घटता हुआ संख्यात गुणा हीन हो गया है ।

चूंकि स्थिति-सत्त्व घट रहा है, अत: स्थितिकांडक का आयाम भी संख्यात गुणा हीन हो गया है ।

प्रश्न – अपूर्वकरण में प्रत्येक समय में अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ रही है। फिर स्थितिकांडक का आयाम बढ़ने के स्थान पर घट क्यों रहा है?

उत्तर – यद्यपि विशुद्धि बढ़ रही है, तथापि स्थिति कांडक का आयाम सत्त्व के अनुसार बनता है ।

यदि स्थिति-सत्त्व हीन है, तो कांडक का आयाम भी कम होगा ।

यदि स्थिति-सत्त्व अधिक है, तो कांडक का आयाम भी अधिक होगा ।

चूंकि स्थिति-सत्त्व संख्यात गुणा हीन हो गया है, अतः स्थितिकांडक का आयाम भी संख्यात गुणा हीन हो गया है ।

www.JainKosh.org

अपूर्वकरण में कितने अंतर्मुहूर्त हो जाते हैं?

मानाकि किसी जीव का स्थितिसत्त्व उत्कृष्ट अंत:कोड़ाकोड़ी सागर है । यह अपूर्वकरण के अंत में संख्यात गुणा हीन होकर रह गया ।

यहाँ सबसे छोटा भी संख्यात मानें, तो 2 होता है । अर्थात् सत्त्व 1 कोड़ाकोड़ी से $\frac{1 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}}{2}$ रह गया ।

याने 50 लाख करोड़ सागर सत्त्व घाता गया । और लगभग इतना ही शेष रह गया ।

यदि स्थितिकांडकघात द्वारा 1 सागर घाता जाता है तो 1 सागर घातने में 1 अंतर्मुहूर्त लगा ।

तो 50 लाख करोड़ सागर घातने में 50 लाख करोड़ अंतर्मुहूर्त लगे !! ये सब भी अपूर्वकरण के एक अंतर्मुहूर्त में हो जाते हैं क्योंकि अंतर्मुहूर्त के असंख्यातों प्रकार हैं ।

एक्केक्कट्ठिदिखंडय-णिवडणठिदिबंधओसरणकाले । संखेज्जसहस्साणि य, णिवडंति रसस्स खंडाणि ॥79॥

- अन्वयार्थः- (एक्केक्कट्ठिदिखंडयणिवडणठिदिबंध ओसरणकाले) एक-एक स्थितिखंड के उत्कीरणकाल में और स्थितिबंधापसरण-काल में (संखेज्जसहस्साणि य) संख्यात हजार (रसस्स खंडाणि) अनुभागकाण्डकों का (णिवडंति) घात होता है ॥79॥

www.JainKosh.org

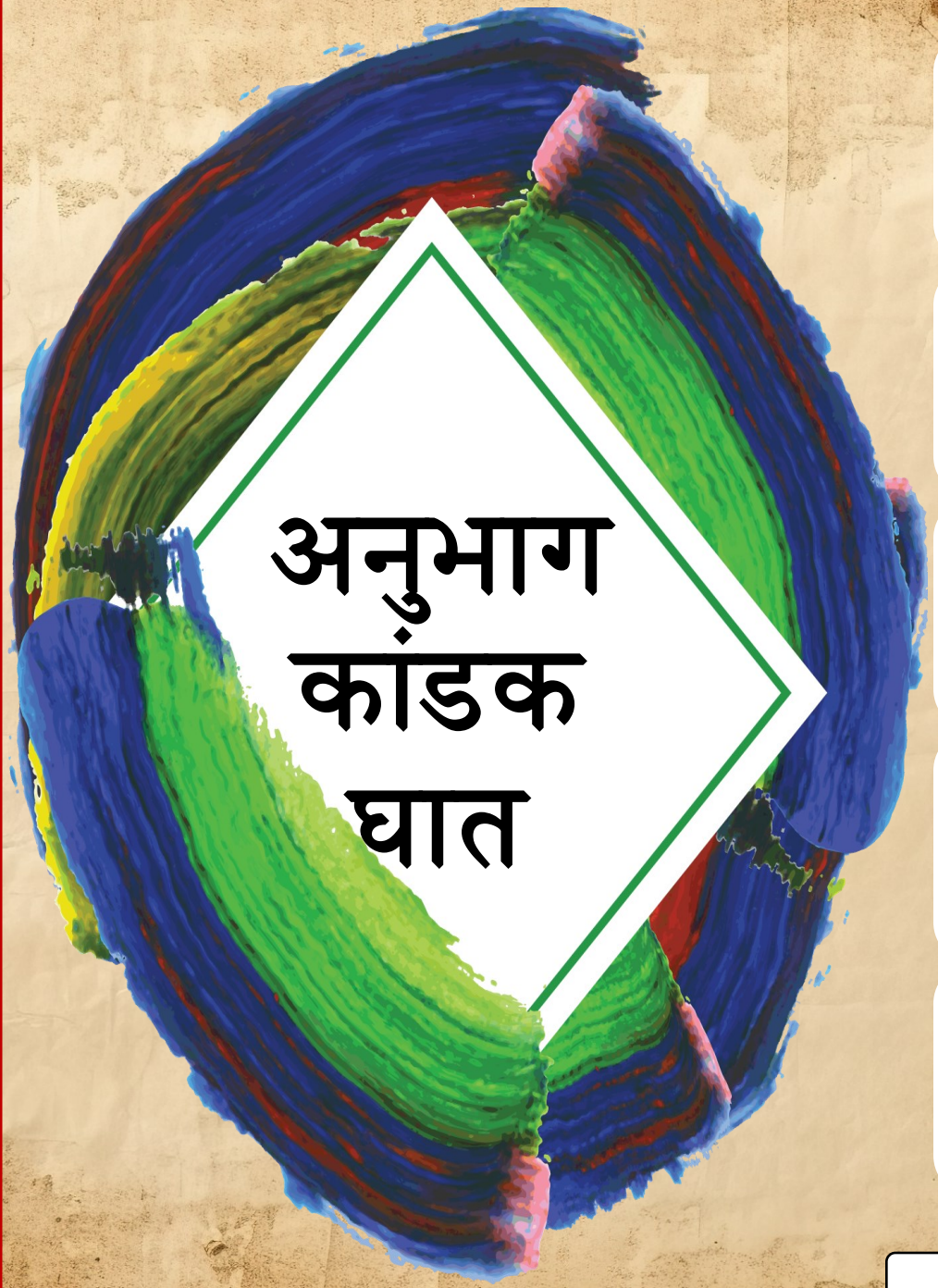

सत्ता में स्थित

पाप प्रकृतियों का अनुभाग

हर अंतर्मुहूर्त में

अनंत बहुभाग नष्ट करना

अनुभागकांडक घात कहलाता है ।

www.JainKosh.org

अनुभागकांडक घात कैसे होता है?

जितने अनुभाग का नाश करना है, अग्र भाग के उतने अनुभाग के स्पर्धकों को हीन अनुभाग के स्पर्धकों में दिया जाता है ।

एक अंतर्मुहूर्त में सारे स्पर्धकों को हीन अनुभाग में देने पर अधिक शक्ति वाले स्पर्धक समाप्त हो जाते हैं ।

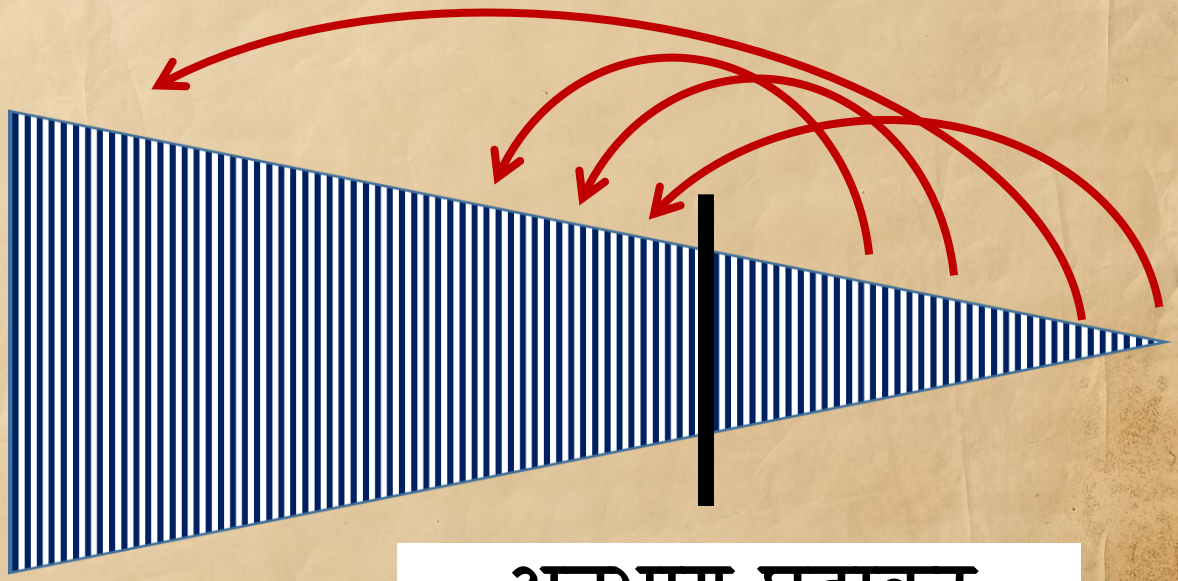

अनुभाग घटाकर अधिक शक्ति वाले स्पर्धकों को हीन शक्ति वाले स्पर्धकों में लाना

www.JainKosh.org

अनुभागकाण्डक घात - विशेष

स्थितिकांडकघात का और स्थिति बंधापसरण का काल समान अंतर्मुहूर्त है ।

उस एक अंतर्मुहूर्त में हजारों अनुभागकांडकघात हो जाते हैं ।

एक अनुभाग खण्डन में अंतर्मुहूर्त काल लगता है । तथापि स्थितिकांडकघात में लगने वाले अंतर्मुहूर्त का संख्यातवाँ भाग ही लगता है ।

एक स्थितिकांडकघात के काल की संदृष्टि = 222

तो अनुभागकांडकघात का काल = $\frac{\text{स्थितिकांडकघात का काल}}{\text{संख्यात}} = \frac{222}{2} = 22$

मानाकि 1 स्थितिकांडकघात में 10000 समय लगते हैं । 1 अनुभागकांडकघात में 5 समय लगते हैं ।

तो एक स्थितिकांडकघात में कितने अनुभागघात हो जाएंगे ?

$\frac{\text{स्थितिकांडकघात का काल}}{\text{अनुभागकांडकघात का काल}} = \frac{10000}{5} = 2000$

याने 1 स्थितिकांडकघात में 2000 अनुभागकांडक हुये । इसी प्रकार वास्तविक गणित में एक स्थितिकांडकघात में हजारों अनुभागकांडक जानना ।

असुहाणं पयडीणं, अणंतभागा रसस्स खंडाणि । सुहपयडीणं णियमा, णत्थि त्ति रसस्स खंडाणि ॥80॥

- अन्वयार्थ- (असुहाणं पयडीणं) अशुभ प्रकृतियों के (रसस्स) अनुभाग के (अनंतभागा) अनंत बहुभागप्रमाण (खंडाणि) काण्डक होते हैं ।
- (सुहपयडीणं) शुभ प्रकृतियों के (रसस्स खंडाणि) अनुभाग के खंड (णियमा) नियम से (णत्थि त्ति) नहीं होते हैं ॥80॥

www.JainKosh.org

अनुभाग-काण्डक-घात

अनुभागकांडक के द्वारा असाता आदि अप्रशस्त प्रकृतियों का ही अनुभाग सत्त्व नष्ट होता है ।

विशुद्ध परिणामों के द्वारा साता आदि प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग नहीं घाता जाता है ।

अनुभाग घात अनंत बहुभाग का होता है । अर्थात् कुल अनुभाग-सत्त्व में अनंत का भाग लगाने पर प्राप्त एक भाग शेष रखा जाता है । बाकी बहुभाग प्रमाण अनुभाग का घात किया जाता है ।

www.JainKosh.org

अनुभाग-काण्डक-घात

एक अनुभागकांडक के बाद अगले अनुभागकांडक के द्वारा शेष अनंतवें अनुभाग का पुनः घात किया जाता है । शेष अनुभाग में अनंत का भाग लगाकर उपलब्ध अनंतवाँ भाग रखा जाता है, शेष बहुभाग को नष्ट किया जाता है ।

इसी प्रकार प्रत्येक अनुभागकांडक में बहुभाग को घाता जाता है एवं एक अनंतवाँ भाग शेष रखा जाता है ।

ऐसे अनुभागकांडकघात एक स्थितिकांडक के दौरान ही हजारों हो जाते हैं । ऐसे हजारों स्थितिकांडकों में हजारों-हजार अनुभागघात होते हैं ।

अनुभाग-काण्डक-घात

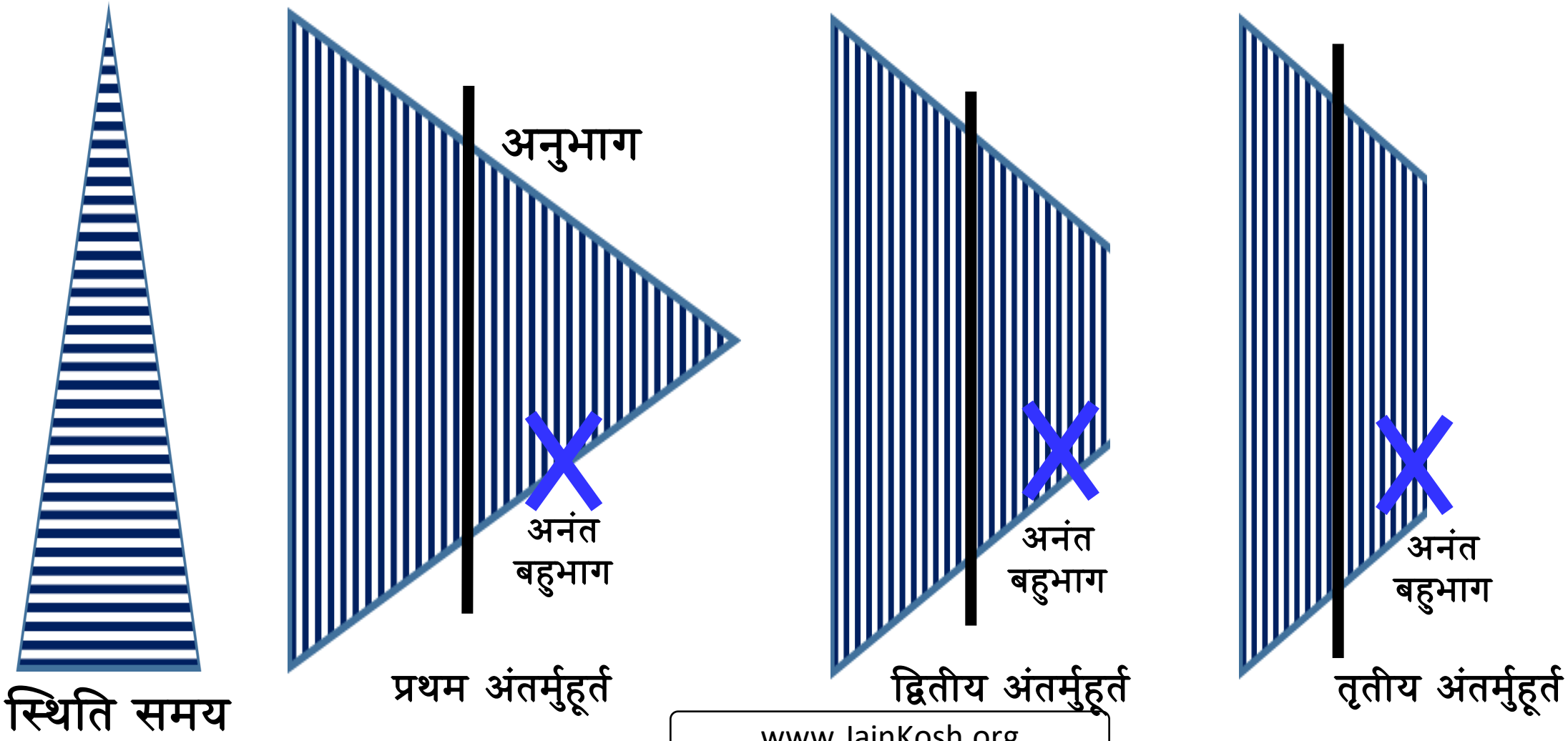

www.JainKosh.org

स्पर्धक

वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं ।

स्थिति की अपेक्षा निषेक संज्ञा होती है और अनुभाग को बताने के लिए स्पर्धक संज्ञा है ।

www.JainKosh.org

अंतिम अनुभाग स्पर्धक की संदृष्टि

अंतिम स्पर्धक की अंतिम वर्गणा की शक्ति = व १ ना + ३

व = जघन्य वर्गणा

१ = एक गुणहानि की स्पर्धकों की संख्या

ना = नाना गुणहानि

३ = एक स्पर्धक की 4 वर्गणा मानी। तो अंतिम वर्गणा निकालने के लिए (वर्गणा संख्या – 1) जोड़ा।

www.jainkosh.org

व × ९ करने पर एक गुणहानि की अंतिम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा हुई।

व × ९ × ना करने पर अंतिम गुणहानि के अंतिम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा की शक्ति हुई।

एक स्पर्धक में चार वर्गणाएँ मानी हैं ।

एक-एक अविभाग-प्रतिच्छेद से वर्गणा बढ़ती है ।

इसलिए अंतिम वर्गणा = प्रथम वर्गणा + (वर्गणा की संख्या – 1)

व ९ ना + (४–१)

= व ९ ना + ३

इसके आधार पर अंतिम स्पर्धक इस प्रकार बनता है -

व	९	ना + ३
व	९	ना + २
व	९	ना + १
व	९	ना

अंतिम स्पर्धक

यह जो उत्कृष्ट अनुभाग है, इसमें अनंत का भाग देकर लब्ध शेष रहता है, शेष बहुभाग नष्ट किया जाता है ।

व ९ ना + ३

$\frac{\text{व ९ ना + ३}}{\text{ख}}$

अनंतवाँ भाग

यह शेष रहता है ।

$\frac{\text{व ९ ना+३}}{\text{ख}} \times (\text{ख}-1)$

अनंत बहुभाग

इसे नष्ट किया जाता है ।

www.JainKosh.org

रसगदपदेसगुणहाणिट्ठाणगफड्डयाणि थोवाणि । अइत्थावणणिक्खेवे, रसखंडेणंतगुणियकमा ॥81॥

- अन्वयार्थः- (रसगदपदेसगुणहाणिट्ठाणगफड्डयाणि) अनुभाग संबंधी एक प्रदेश गुणहानिस्थान में स्पर्धक (थोवाणि) कम हैं।
- उससे (अइत्थावणणिक्खेवे रसखंडेणंतगुणियकमा) अतिस्थापनारूप स्पर्धक अनन्त गुणे हैं। उससे निक्षेपरूप स्पर्धक अनन्तगुणे हैं और उससे अनुभागकांडकरूप स्पर्धक अनन्त गुणे हैं ॥81॥

www.JainKosh.org

अनुभागकांडक संबंधी अल्प-बहुत्व

पद	गुणाकार	अर्थसंदृष्टि
एक गुणहानिस्थान में स्पर्धक	स्तोक	९
अतिस्थापनारूप स्पर्धक	अनन्त गुणित	९ × ख
निक्षेपरूप स्पर्धक	अनन्त गुणित	९ × ख × ख
अनुभागकांडकरूप स्पर्धक	अनन्त गुणित	९ × ख × ख × ख

www.JainKosh.org

अनुभाग संबंधी निक्षेप आदि

जैसे अपकर्षण–उत्कर्षण के विषय में निक्षेप, अतिस्थापना का स्वरूप बताया था, उसी प्रकार अनुभाग के अपकर्षण–उत्कर्षण के विषय में भी जानना चाहिए ।

अनुभाग-गत गुणहानिस्थान	अनुभागगत एक गुणहानि में जितना अनुभाग (जितने स्पर्धक) है ।
अतिस्थापनारूप स्पर्धक	अपकर्षण करने पर नीचे जितने स्पर्धक छोड़े जाते हैं।
निक्षेपरूप स्पर्धक	जिन स्पर्धकों में द्रव्य दिया जाता है।
कांडक-आयाम	जितने स्पर्धकों का अभाव किया जाता है।

www.JainKosh.org

उदाहरण:

मानाकि
कुल स्पर्धक = 28,
एक गुणहानि के स्पर्धक = 2,
अनंत का प्रमाण = 2

गुणहानि के स्पर्धक	2
अतिस्थापनारूप स्पर्धक	2 × 2 = 4
निक्षेपरूप स्पर्धक	4 × 2 = 8
कांडकरूप स्पर्धक	8 × 2 = 16

www.JainKosh.org

अनुभाग स्पर्धकों का निक्षेप आदि

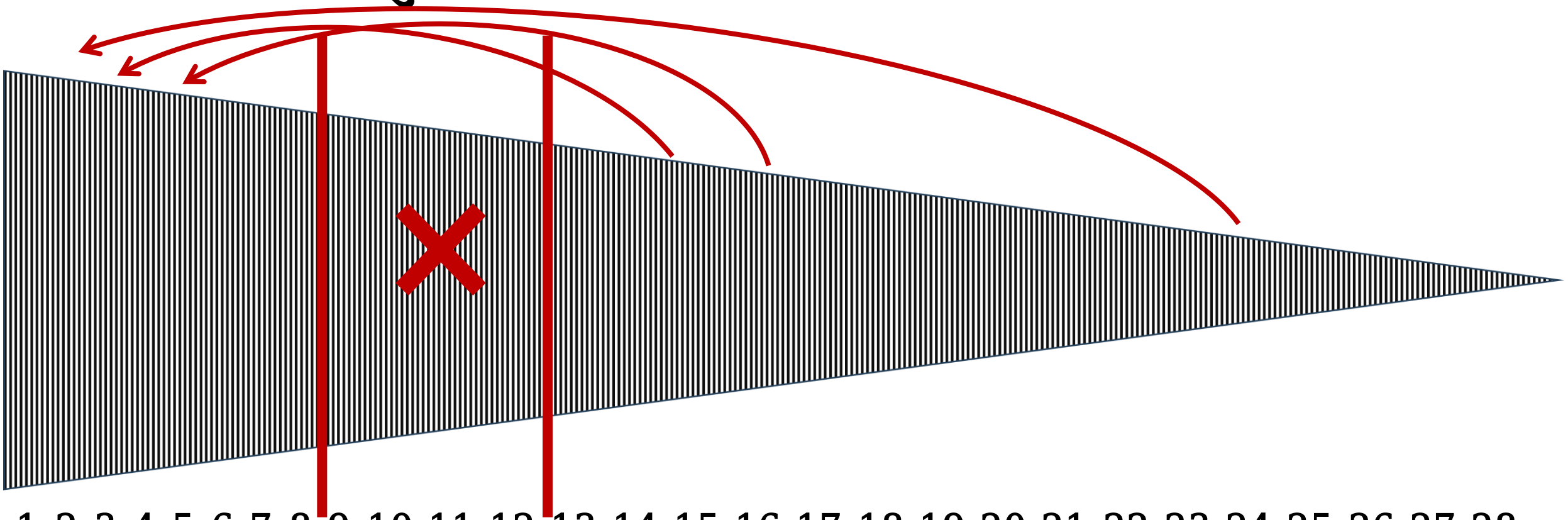

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28

1 गुणहानि

निक्षेपरूप स्पर्धक

अतिस्थापनारूप स्पर्धक

कांडकरूप स्पर्धक

www.JainKosh.org

पढमापुव्वरसादो, चरिमे समये पसत्थइदराणं ।
रससत्तमणंतगुणं, अणंतगुणहीणयं होदि ॥82॥

- अन्वयार्थ- (पसत्थइदराणं) प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियों के (पढमापुव्वरसादो) अपूर्वकरण के प्रथम समय के अनुभाग सत्त्व की अपेक्षा (चरिमे समये) अंतिम समय में (रससत्तं) अनुभागसत्त्व क्रमशः (अणंतगुणं) अनन्तगुणित व (अणंतगुणहीणयं) अनन्तगुणित हीन (होदि) होता है अर्थात् शुभ प्रकृतियों का अनन्तगुणा और अशुभ प्रकृतियों का अनन्तगुणा हीन अनुभागसत्त्व होता है ॥82॥

www.JainKosh.org

अपूर्वकरण के प्रारंभ व अंत में अनुभाग-सत्त्व

	प्रारंभ	अंत
प्रशस्त प्रकृति	चतु:स्थानीय	चतु:स्थानीय × अनंत
अप्रशस्त प्रकृति	द्विस्थानीय	$\frac{\text{द्विस्थानीय}}{\text{अनंत}}$

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि के माहात्म्य से प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा होता है ।

अनुभागकांडकघात के माहात्म्य से अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंत गुणा हीन होता है ।

अपूर्वकरण के आवश्यक - उपसंहार

गुणश्रेणी निर्जरा	गुण संक्रमण	स्थिति खंडन	अनुभाग खंडन
प्रदेशों की	प्रकृति का	स्थिति का	अनुभाग का
क्षेत्र	द्रव्य	काल	भाव

विदियं व तदियकरणं, पडिसमयं एक्क एक्क परिणामो।
अण्णं ठिदिरसखंडं, अण्णं ठिदिबंधमाणुवई ॥83॥

- अन्वयार्थ- (विदियं व तदियकरणं) दूसरे अपूर्वकरण के समान ही तीसरा अनिवृत्तिकरण होता है ।
- (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (एक्क एक्क परिणामो) एक-एक ही परिणाम होता है।
- (अण्णं ठिदिरसखंडं) पूर्व से अन्य ही स्थितिकाण्डक, अन्य ही अनुभागकाण्डक और (अण्णं ठिदिबंधं) अन्य ही स्थितिबंध (आणुवई) प्रारम्भ करता है ॥83॥

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण

अ + निवृत्ति + करण

विद्यमान नहीं है + भेद + विशुद्ध परिणामों में

वह अनिवृत्तिकरण है ।

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण - विशेष

शरीर का संस्थान, वर्ण, वय तथा उपयोगादि में भेद संभव है ।

यहाँ प्रत्येक समय सभी जीवों के एक जैसा, एक ही परिणाम संभव है ।

इसका काल अन्तर्मुहूर्त है ।

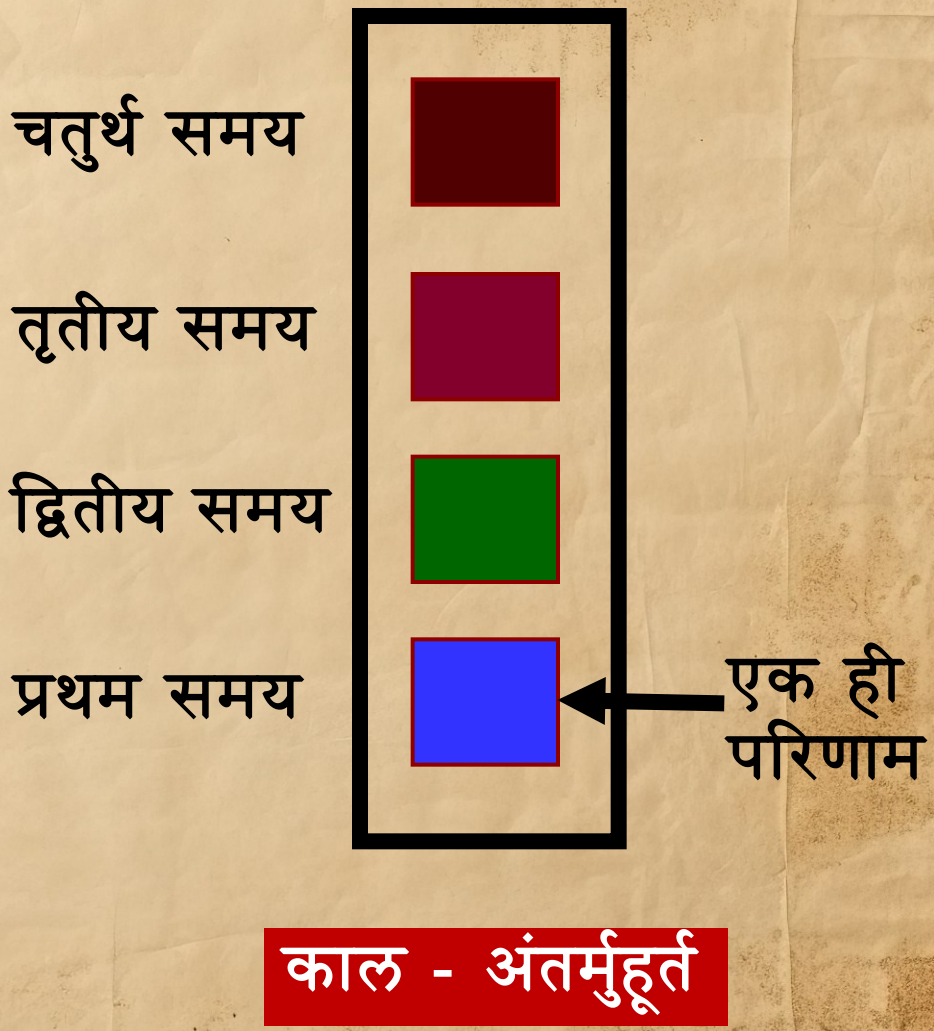

अनिवृत्तिकरण - विशेष

अपूर्वकरण में पाये जाने वाले सारे आवश्यक यहाँ भी पाये जाते हैं ।

जैसे अपूर्वकरण के अंत समय में भी षट्स्थान वृद्धिगत जघन्य से उत्कृष्ट तक असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम पाये जाते हैं, वैसे अनिवृत्तिकरण में प्रत्येक समय में अनेकों परिणाम नहीं पाये जाते । एक-एक ही परिणाम पाया जाता है क्योंकि सभी जीवों की विशुद्धि समान ही होती है ।

अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय में नवीन स्थितिकांडक, नवीन ही अनुभागकांडक और नवीन ही स्थितिबंध प्रारंभ होता है क्योंकि अपूर्वकरण के अंतिम समय में पूर्व के स्थितिकांडक, अनुभागकांडक और स्थितिबंध समाप्त हो जाते हैं ।

संखेज्जदिमे सेसे, दंसणमोहस्स अंतरं कुणइ।
अण्णं ठिदिरसखंडं, अण्णं ठिदिबंधणं तत्थ ॥84॥

- अन्वयार्थ- अनिवृत्तिकरणकाल का (संखेज्जदिमे सेसे) संख्यातवाँ भाग शेष रहने पर (दंसणमोहस्स) दर्शनमोह का (अंतरं) अंतर (कुणइ) करता है।
- (तत्थ) वहाँ (अण्णं ठिदिरसखंडं) पूर्व की अपेक्षा अन्य ही स्थितिखंड, अनुभागखंड और (अण्णं ठिदिबंधणं) अन्य ही स्थितिबंध करता है ॥84॥

www.JainKosh.org

दर्शनमोह का अंतरकरण कब?

अनिवृत्तिकरण का काल = 2२

इसका संख्यातवाँ भाग = 2२ १/५

संख्यात बहुभाग = 2२ ४/५

अनिवृत्तिकरण का संख्यात बहुभाग बीत जाने पर दर्शनमोह का अंतरकरण करता है ।

अंतरकरण के प्रथम समय में अन्य ही स्थितिबंध, स्थितिखंड, अनुभागखंड होते हैं, क्योंकि इसके पूर्व समय में पहले के स्थितिबंधादि समाप्त हो जाते हैं ।

अंतरकरण

परिणाम विशेष के द्वारा

विवक्षित कर्मों की

नीचे और ऊपर की स्थितियों को छोड़कर

मध्य की अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति के निषेकों के

अभाव करने को

अंतरकरण कहते हैं ।

नोट – यह अंतरकरण की क्रिया मात्र मोहनीय कर्म में ही संभव है, अन्य कर्मों में नहीं ।

www.JainKosh.org

अंतरकरण

द्वितीय स्थिति

- अंतरायाम से ऊपर के निषेकों का नाम द्वितीय स्थिति है।

अंतरायाम

- अंतर के अंतर्मुहूर्त प्रमाण आयाम को अंतरायाम कहते हैं ।

प्रथम स्थिति

- यहाँ जिन निषेकों का अभाव किया उनसे नीचे की स्थिति का नाम प्रथम स्थिति है ।

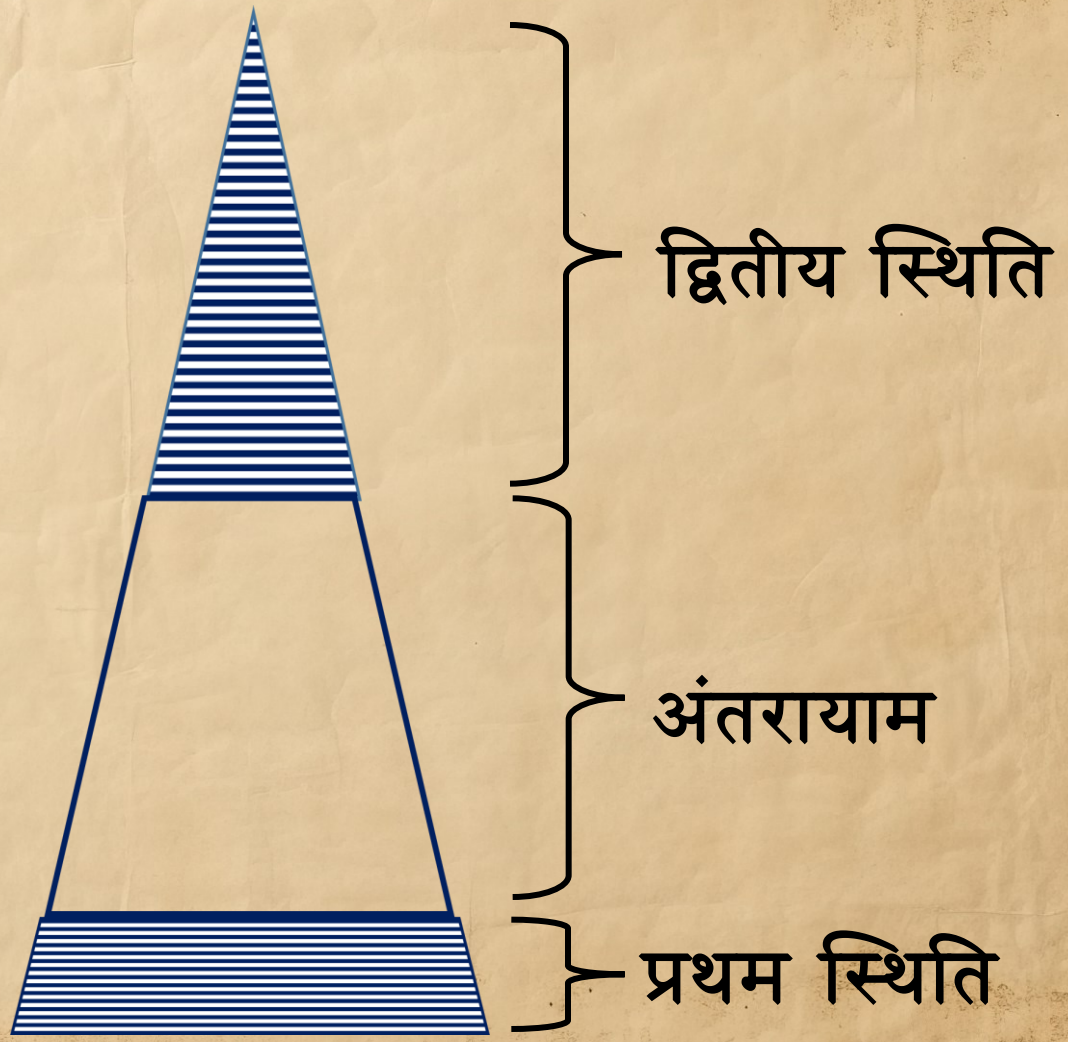

www.JainKosh.org

एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अंतरस्स णिप्पत्ती । अंतोमुहुत्तमेत्तं, अंतरकरणस्स अद्धाणं ॥85॥

- अन्वयार्थ- (एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले) एक स्थितिखंडोत्कीरण काल में (अंतरस्स णिप्पत्ती) अंतर की निष्पत्ति होती है।
- (अंतरकरणस्स अद्धाणं) अंतरकरण का काल (अंतोमुहुत्तमेत्तं) अंतर्मुहूर्तमात्र है ॥85॥

www.JainKosh.org

एक स्थितिकांडक में जितना अंतर्मुहूर्त काल लगता है, उतने समय में अंतरकरण की क्रिया संपन्न होती है ।

अर्थात् एक अंतर्मुहूर्त में अंतरकरण किया जाता है।

गुणसेढीए सीसं, तत्तो संखगुण उवरिमठिदिं च ।
हेट्ठुवरिम्हि य आबाहुज्झिय बंधम्हि संछुहदि ॥86॥

- अन्वयार्थ- (गुणसेढीए सीसं) गुणश्रेणी का शीर्ष (च) और (तत्तो संखगुण उवरिमठिदिं च) उससे संख्यात गुणी उपरितन स्थिति को (स्थिति के निषेकों को) (हेट्ठुवरिम्हि य) नीचे और ऊपर (आबाहुज्झियं) आबाधा से रहित (बंधम्हि) बध्यमान कर्म में (संछुहदि) देता है ॥86॥

www.JainKosh.org

गुणश्रेणी शीर्ष

गुणश्रेणि निर्जरा का आयाम अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और अनिवृत्तिकरण के काल से थोड़ा अधिक है। वह अधिक काल ही गुणश्रेणिशीर्ष कहलाता है।

जो गुणश्रेणी निर्जरा में गुणश्रेणी का आयाम अपूर्वकरण + अनिवृत्तिकरण + $\frac{\text{अनिवृत्तिकरण}}{\text{संख्यात}}$ कहा था, उसमें यह $\frac{\text{अनिवृत्तिकरण}}{\text{संख्यात}}$ प्रमाण काल ही गुणश्रेणी शीर्ष कहलाता है ।

गुणश्रेणी शीर्ष का प्रमाण = $\frac{2}{४}$

अंतरायाम का प्रमाण

गुणश्रेणी शीर्ष से संख्यात गुणा ऊपर की स्थिति = 2 २२ / ४

इन दोनों का संयुक्त प्रमाण अंतरायाम का प्रमाण है ।

गुणश्रेणी शीर्ष + शीर्ष × संख्यात = अंतरायाम

2 २ / ४ + 2 २२ / ४

= (2 २ + 2 २२) / ४ = (2 २ × (२ + 1)) / ४

गुणश्रेणी शीर्ष के नीचे शेष रहा गलितावशेष गुणश्रेणी-आयाम है ।

यह शीर्ष से संख्यात गुणा है । 2 २ ३ / ४

अंतरायाम का निर्माण

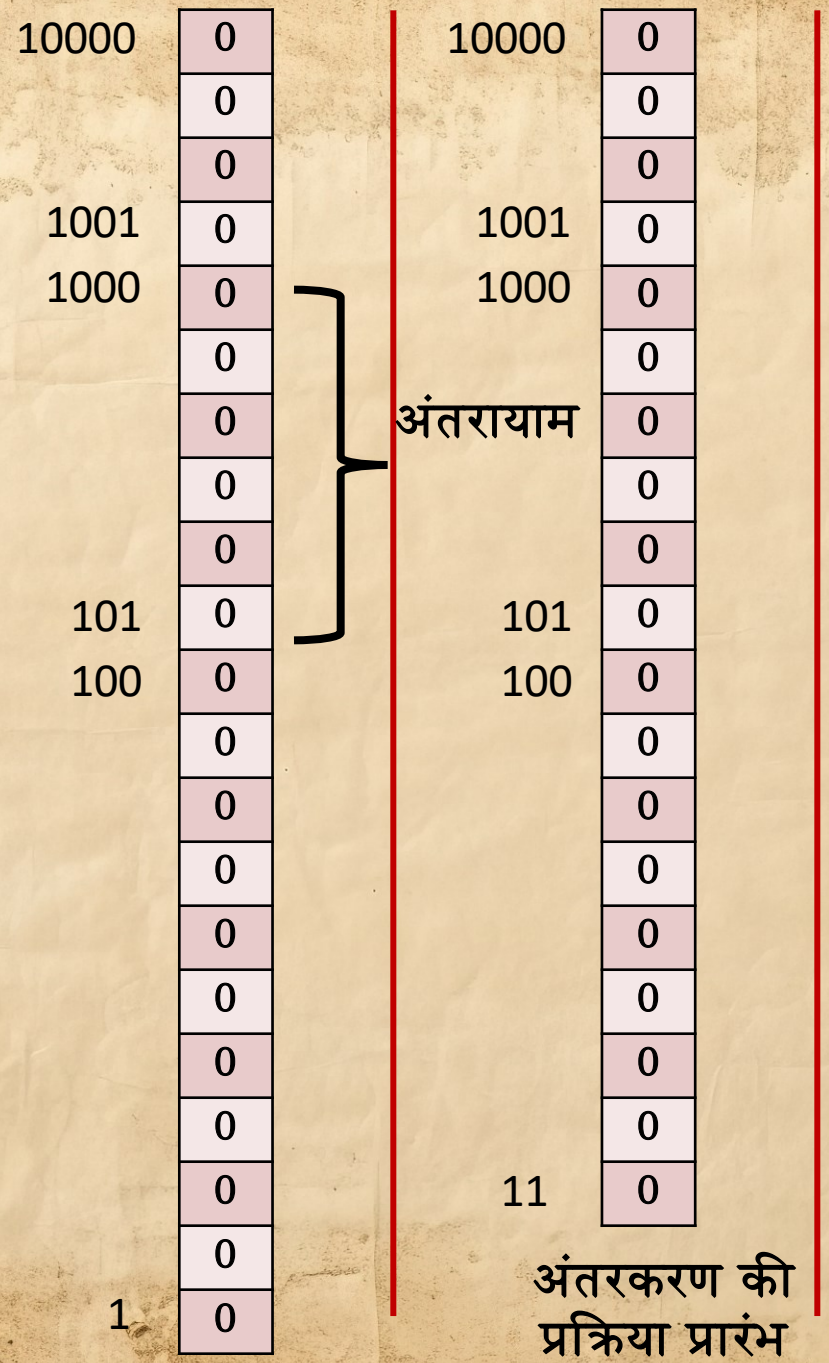

अंतरकरण के द्वारा

अंतरायाम के निषेकों को उत्कीर्ण कर

अपकर्षण द्वारा अंतरायाम के नीचे तथा

उत्कर्षण के द्वारा तत्काल बध्यमान मिथ्यात्व प्रकृति में

अंतरायाम के ऊपर दिया जाता है ।

www.JainKosh.org

अंतरकरण में होने वाली प्रक्रिया

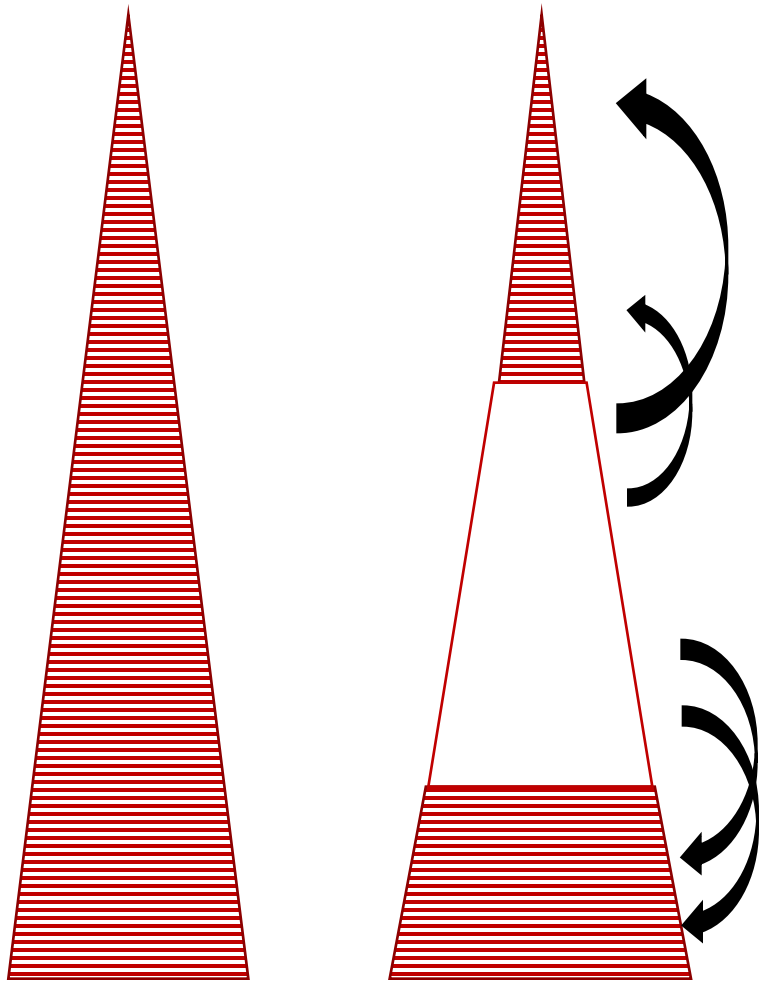

मिथ्यात्व कर्म मिथ्यात्व कर्म

कर्मों के निषेकों को आगे करना
(उत्कर्षण)

अंतरायाम
(कर्म के निषेकों का अभाव)
अंतर्मुहूर्त कालप्रमाण

कर्मों के निषेकों को पहले करना
(अपकर्षण)

www.JainKosh.org

उत्कर्षण के नियम अनुसार बंधने वाले कर्म में आबाधा को छोड़कर शेष यथायोग्य निषेकों में द्रव्य उत्कर्षित होता है ।

यहाँ भी अंतरायाम का द्रव्य उत्कर्षित होता है । वह बंधने वाले मिथ्यात्व कर्म की आबाधा के ऊपर के निषेकों में दिया जाता है ।

वर्तमान में बंधने वाले मिथ्यात्व कर्म की आबाधा अंतरायाम से संख्यात गुणी होने से अंतरायाम के काफी बाद है । वहाँ के निषेकों में अंतरायाम के द्रव्य का उत्कर्षण होता है ।

अंतरायाम के नीचे भी मिथ्यात्व के निषेक हैं । अंतरायाम के निषेकों को अपकर्षण द्वारा इन नीचे के निषेकों में भी अपकर्षित किया जाता है ।

दर्शन मोहनीय की अंतरकरण विधि की रचना

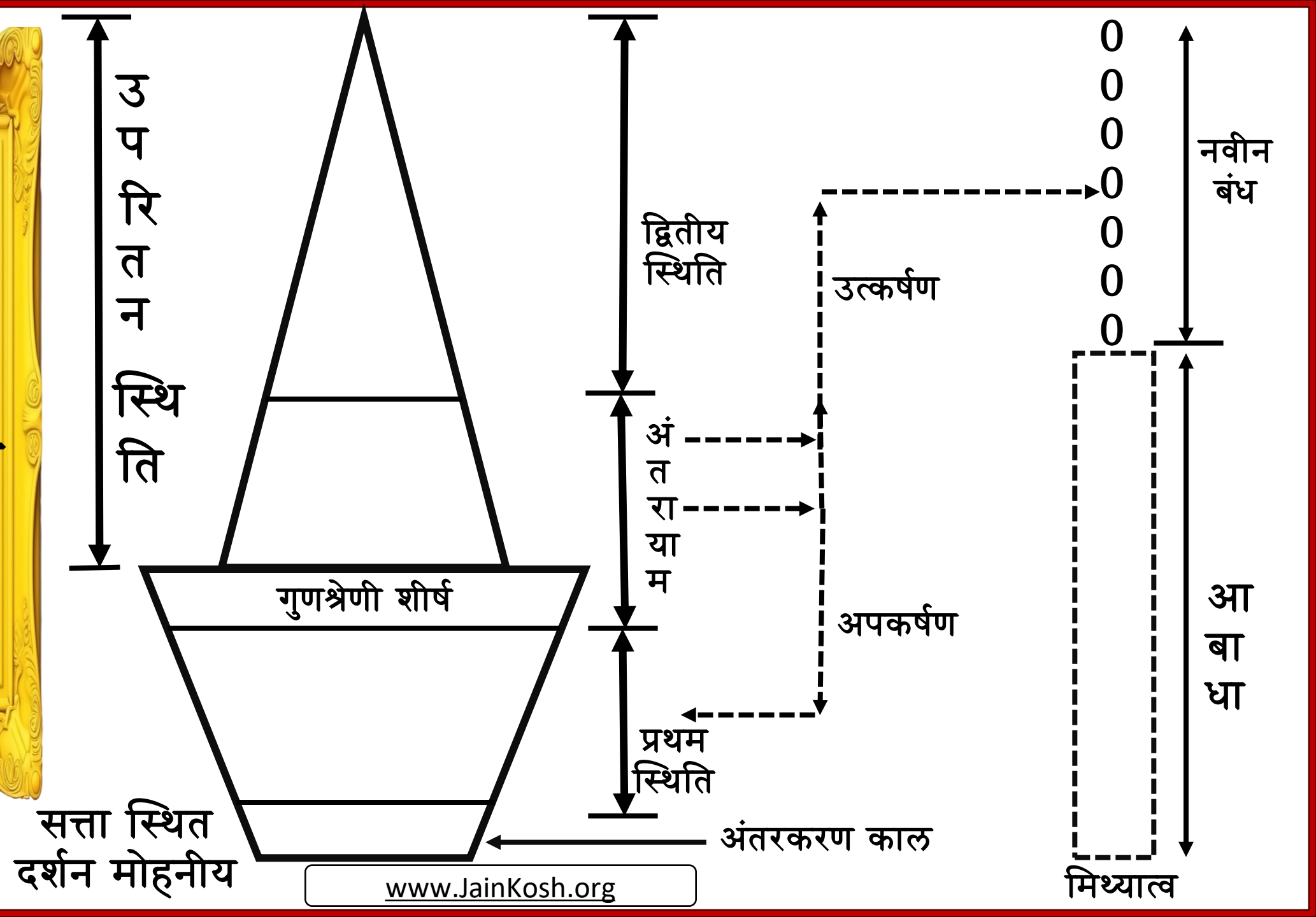

www.JainKosh.org

अनादि मिथ्यादृष्टि के मात्र मिथ्यात्व का ही सत्त्व होने से वह एक मिथ्यात्व का ही अंतरकरण करता है ।

सादि मिथ्यादृष्टि के मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति का भी सत्त्व संभव है । जिसके इनका सत्त्व है, वह इन दोनों का भी अंतरकरण करता है ।

मिश्र व सम्यक्त्व प्रकृति की प्रथम स्थिति आवली मात्र रहती है क्योंकि मिथ्यात्व गुणस्थान में यह उदयवाली प्रकृति नहीं है ।

मिश्र व सम्यक्त्व प्रकृति की द्वितीय स्थिति वहीं से है, जहाँ से मिथ्यात्व की द्वितीय स्थिति है।

शेष बीच के निषेक अंतरायाम के निषेक हैं ।

अंतरायाम के निषेकों को मिथ्यात्व की प्रथम स्थिति में तथा मिथ्यात्व की द्वितीय स्थिति में दिया जाता है ।

www.jainkosh.org

मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति का अंतरायाम

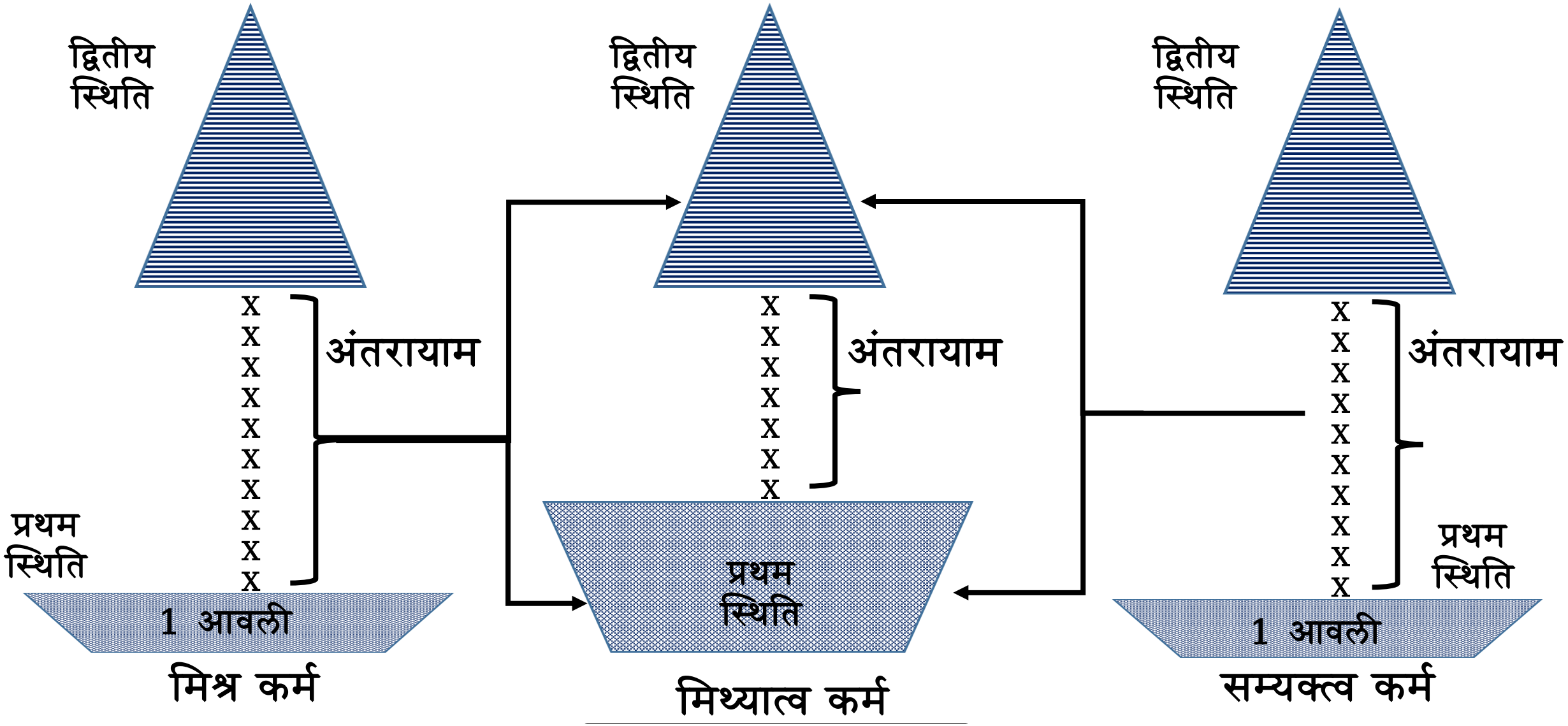

संदृष्टियाँ

गुणश्रेणी शीर्ष

- = २𝒬/४

शेष अनिवृत्तिकरण का काल

- शीर्ष से संख्यात गुणा काल = (२𝒬/४) ३

अंतरकरण का काल

- शेष अनिवृत्तिकरण का काल / संख्यात = (२𝒬/४) (३/४)

प्रथम स्थिति

- शेष अनिवृत्तिकरण का संख्यात बहुभाग = (२𝒬/४) ३ (३/४)

अंतरायाम

- प्रथम स्थिति के ऊपर अंतर्मुहूर्त प्रमाण = २𝒬 × (𝒬 + 1)

www.JainKosh.org

अंतरकदपढमादो, पडिसमयमसंखगुणिदमुवसमदि । गुणसंकमेण दंसण-मोहणियं जाव पढमठिदी ॥87॥

- अन्वयार्थ- (अंतरकदपढमादो) अंतर करने के पश्चात् प्रथम समय से (जाव पढमठिदी) प्रथम स्थिति के अंतसमय पर्यंत (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (गुणसंकमेण) गुणसंक्रमण भागहार द्वारा (असंखगुणिदं) असंख्यात गुणितरूप से (दंसणमोहणियं) दर्शनमोह का (उवसमदि) उपशम करता है ॥87॥

www.JainKosh.org

उपशमन क्रिया

इस प्रकार एक स्थितिकांडकोत्कीरण प्रमाण काल में अंतरकरण संपन्न हुआ ।

इसके अगले समय से द्वितीय स्थिति में स्थित दर्शन मोहनीय कर्म का उपशमन करता है ।

यह उपशमन प्रथम स्थिति के अंत समय तक करता है ।

प्रथम समय में गुणसंक्रमण भागहार से प्राप्त द्रव्य का उपशमन करता है ।

इसके पश्चात् प्रत्येक समय में असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा द्रव्य का उपशमन करता है ।

www.JainKosh.org

उपशम

जो कर्म परमाणु उदीरणा के अयोग्य होते हैं, उन्हें उपशांत कहा जाता है ।

यहाँ उपशम के द्वारा द्वितीय स्थिति में स्थित दर्शन मोहनीय के द्रव्य को उदीरणा के अयोग्य बनाया जा रहा है,

जिससे उपशम सम्यक्त्व के काल में उनकी उदीरणा ना हो ।

अन्यथा उनकी उदीरणा होने से सम्यक्त्व ही नहीं हो पायेगा ।

किस प्रकृति का उपशमन?

अनादि मिथ्यादृष्टि के मिथ्यात्व का ही सत्त्व होने से वह केवल मिथ्यात्व का ही उपशम करता है ।

सादि मिथ्यादृष्टि के यथायोग्य मिश्र व सम्यक्त्व का सत्त्व होने से वह इन दोनों का भी उपशम करता है ।

www.JainKosh.org

एक साथ पूरे द्रव्य का उपशम नहीं होता ।
प्रत्येक समय में थोड़े-थोड़े द्रव्य का उपशम किया जाता है ।

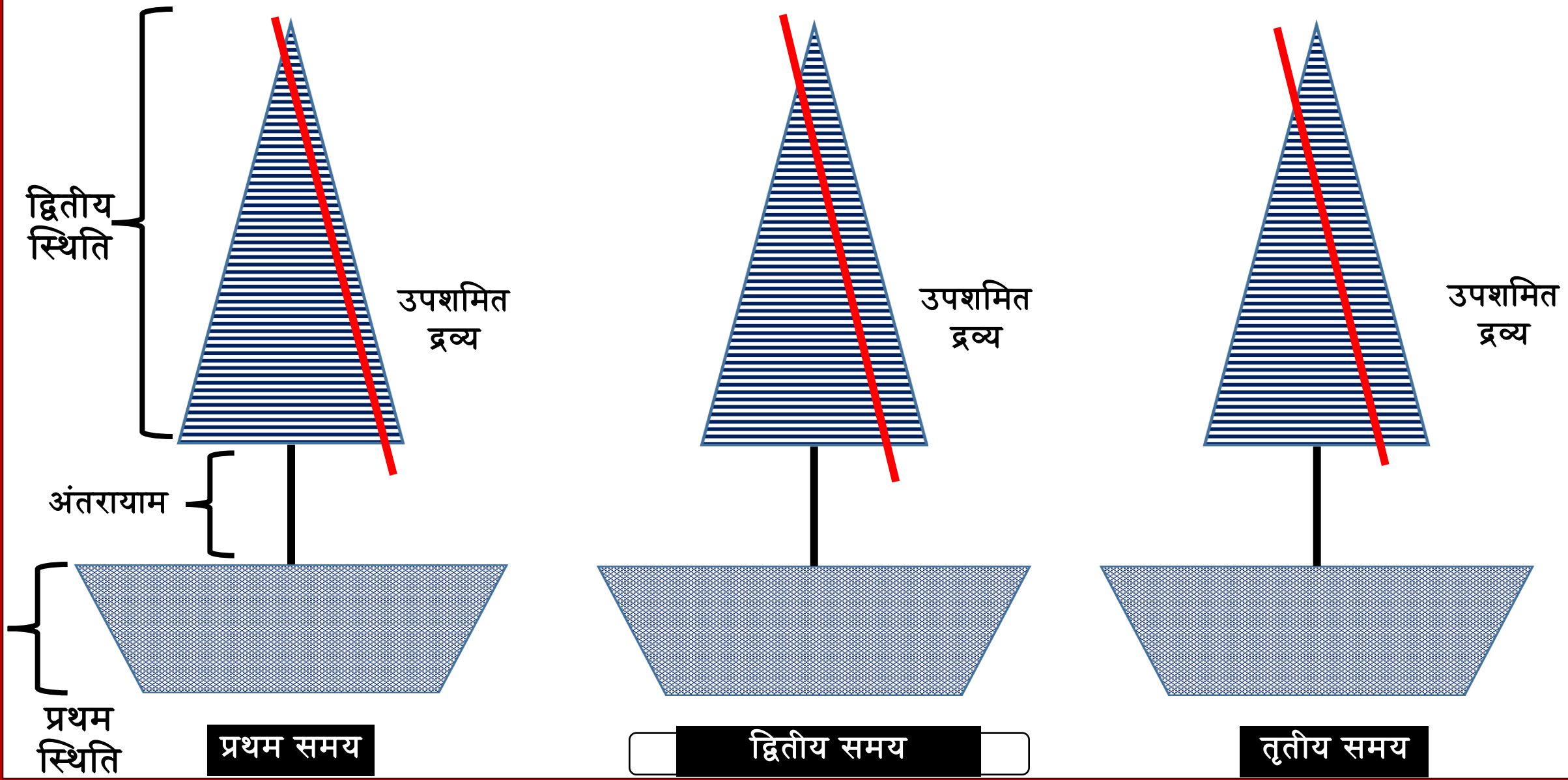

प्रथम स्थिति के अंत समय में जितना द्रव्य उपशांत होने से शेष है, उस सबका उपशम उसी समय किया जाता है।

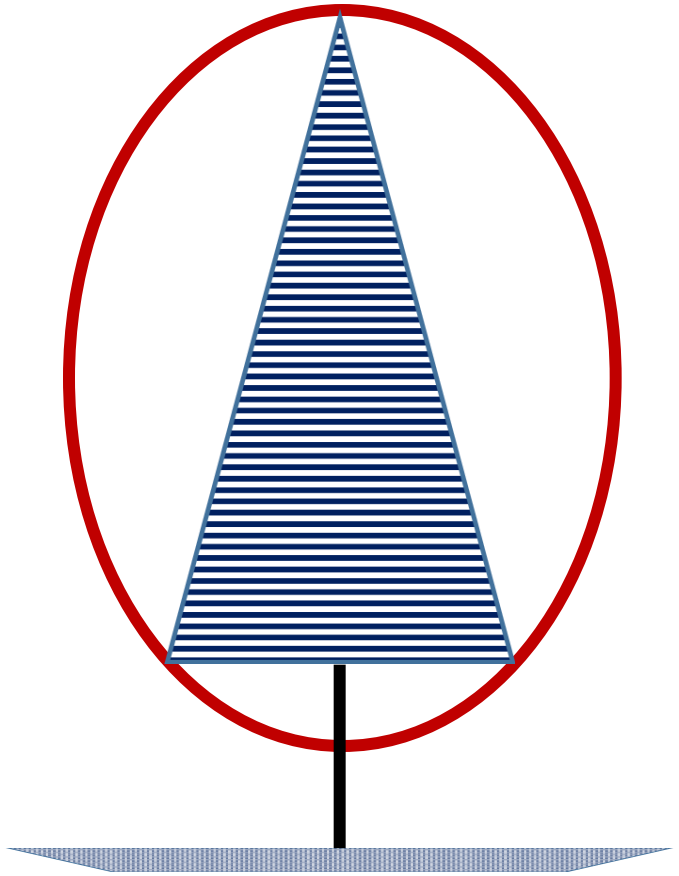

सर्व दर्शन-मोहनीय उपशांत
(नवक समयप्रबद्ध छोड़कर)

प्रथम स्थिति का अंतिम समय

www.JainKosh.org

पढमट्ठिदियावलिपडि-आवलिसेसेसु णत्थि आगाला । पडिआगाला मिच्छत्तस्स य गुणसेढिकरणं पि ॥88॥

- अन्वयार्थ- (पढमट्ठिदियावलिपडिआवलिसेसेसु) प्रथम स्थिति में आवली और प्रत्यावली शेष होने पर (आगाला पडिआगाला) आगाल और प्रत्यागाल (णत्थि) नहीं होते हैं (य) और (मिच्छत्तस्स) मिथ्यात्व का (गुणसेढीकरणं पि) गुणश्रेणीकरण भी (णत्थि) नहीं होता है ॥88॥

www.JainKosh.org

प्रथम स्थिति में इतना काल शेष रहने पर संभव कार्य

काल शेष रहने पर	आगाल-प्रत्यागाल	गुणश्रेणी	उदीरणा	उपशम
2 आवली से अधिक रहने पर	✓	✓	✓	✓
2 आवली रहने पर	✗	✗	✓	✓
1 आवली + 1 समय रहने पर	✗	✗	✓	✓
1 आवली रहने पर	✗	✗	✗	✓
1 समय शेष रहने पर	✗	✗	✗	✓

www.JainKosh.org

आगाल

अपकर्षण के द्वारा द्वितीय स्थिति के द्रव्य का प्रथम स्थिति में दिया जाना आगाल कहलाता है ।

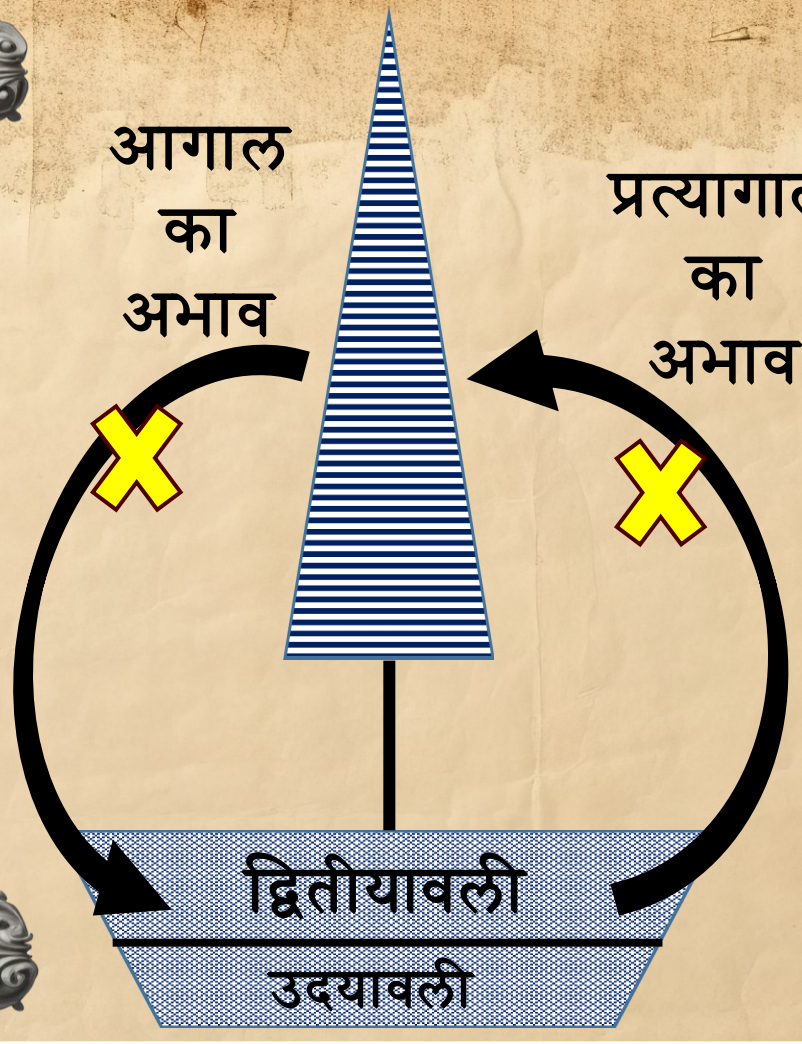

प्रत्यागाल

उत्कर्षण के द्वारा प्रथम स्थिति के द्रव्य का द्वितीय स्थिति में जाना प्रत्यागाल कहलाता है ।

अनिवृत्तिकरण में आगाल-प्रत्यागाल प्रत्येक समय चलता रहता है ।

परंतु अंत में जब दो आवली मात्र काल शेष रहता है, तब यह क्रिया बंद हो जाती है ।

www.JainKosh.org

यहाँ आगाल-प्रत्यागाल क्यों बंद हो जाता है?

इसका भी कारण यह है कि कर्म का उत्कर्षण करने पर वह 1 आवली काल तक तदवस्थ रहता है । उसमें अन्य कुछ भी क्रिया नहीं की जा सकती है ।

तथा द्वितीय स्थिति में स्थित कर्म का उपशम करना है । इस उपशम में भी कम से कम एक आवली काल तो लगता ही है । ऐसी स्थिति में प्रथम स्थिति में स्थित द्रव्य का उत्कर्षण करने एवं उसे उपशांत करने में कम से कम दो आवली का काल चाहिए ।

इसलिये दो आवली + 1 समय शेष रहने तक तो आगाल-प्रत्यागाल पाया जाता है । 2 आवली मात्र शेष रहने पर यह क्रिया बंद हो जाती है ।

2 आवली मात्र शेष रहने पर मिथ्यात्व का गुणश्रेणि निक्षेप भी बंद हो जाता है क्योंकि

1) द्वितीय स्थिति से द्रव्य का अपकर्षण नहीं हो रहा है ।

2) प्रथम स्थिति की प्रथम आवली में द्वितीय आवली से गुणश्रेणि निक्षेप नहीं हो सकता है क्योंकि यहाँ उदयावली बाह्य गुणश्रेणी है ।

3) प्रथम स्थिति की द्वितीय आवली में भी गुणश्रेणी निक्षेप नहीं हो सकता है क्योंकि वहाँ अतिस्थापनावली होने से उसी द्वितीय आवली का द्रव्य उसी आवली में नहीं दिया जा सकता ।

ध्यान रहे – मिथ्यात्व की ही गुणश्रेणी बंद होती है । शेष अन्य कर्मों की गुणश्रेणी पूर्ववत् प्रवर्त रही है ।

www.jainkosh.org

प्रथम स्थिति में दो आवली शेष रहने पर उदीरणा चलती रहती है।

उदीरणा कैसे संभव है ?

द्वितीय आवली के द्रव्य की उदयावली में उदीरणा संभव है । यद्यपि द्वितीय स्थिति से द्रव्य नहीं आ रहा है, तथापि प्रथम स्थिति में ही द्वितीय आवली के द्रव्य का अपकर्षण संभव है । इसी से उदीरणा होती है ।

यह उदीरणा प्रथम स्थिति में (1 आवली + 1 समय) शेष रहने तक होती है ।

एक समय + 1 आवली शेष रहने पर उदयावली के अनंतर पाये जाने वाले 1 निषेक मात्र से उदीरणा होती है ।

इस उदीरणा के होने पर जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप पाया जाता है ।

www.jainkosh.org

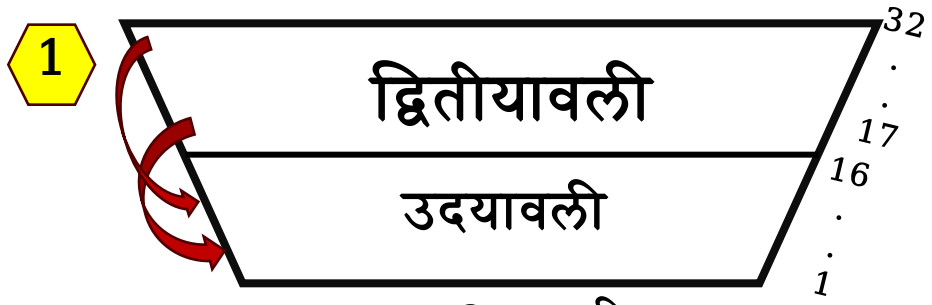

मात्र 2 आवली
शेष रहने पर

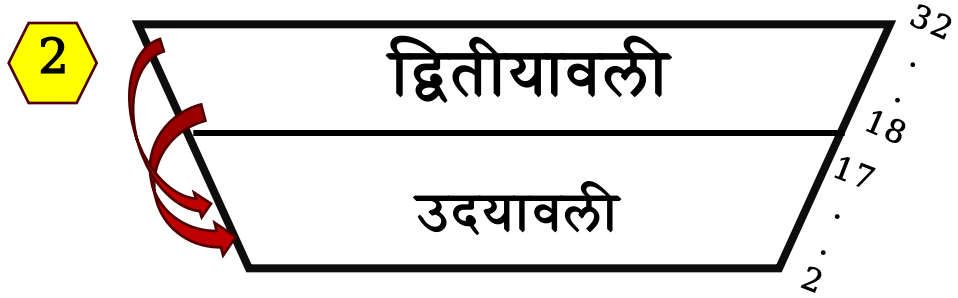

अगले समय

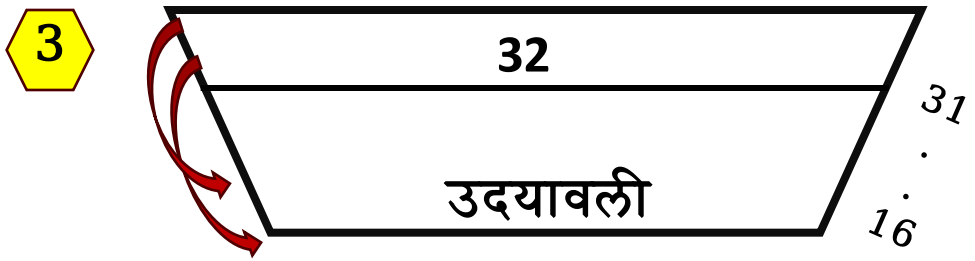

जघन्य उदीरणा

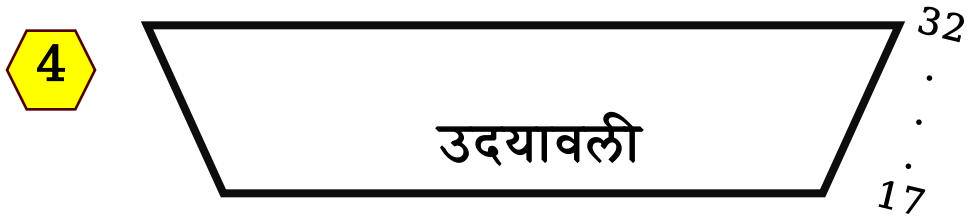

1 आवली शेष रहने पर उदीरणा का अभाव

दर्शन मोहनीय का उपशमविधान तो प्रथम स्थिति के अंत समय तक चलता ही है ।

जो अनिवृत्तिकरण के अंत में बंधा मिथ्यात्व कर्म है, उसका उपशम प्रथम स्थिति समाप्त होने के पश्चात् भी (2 आवली – 1) समय तक चलता है।

अंतरपढमं पत्ते, उवसमणामो हि तत्थ मिच्छत्तं ।
ठिदिरसखंडेण विणा, उवट्ठाइदूण कुणदि तिधा ॥89॥

- अन्वयार्थ- (अंतरपढमं) अंतरायाम के प्रथम समय को (पत्ते) प्राप्त होने पर (हि) निश्चय से उसका (उवसमणामो) प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि नाम है।
- (तत्थ) वहाँ वह (मिच्छत्तं) मिथ्यात्व का (ठिदिरसखंडेण विणा) स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकांडकघात के बिना (उवट्ठाइदूण) अपवर्तन करके (तिधा कुणदि) तीन प्रकार करता है ॥89॥

www.JainKosh.org

प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति

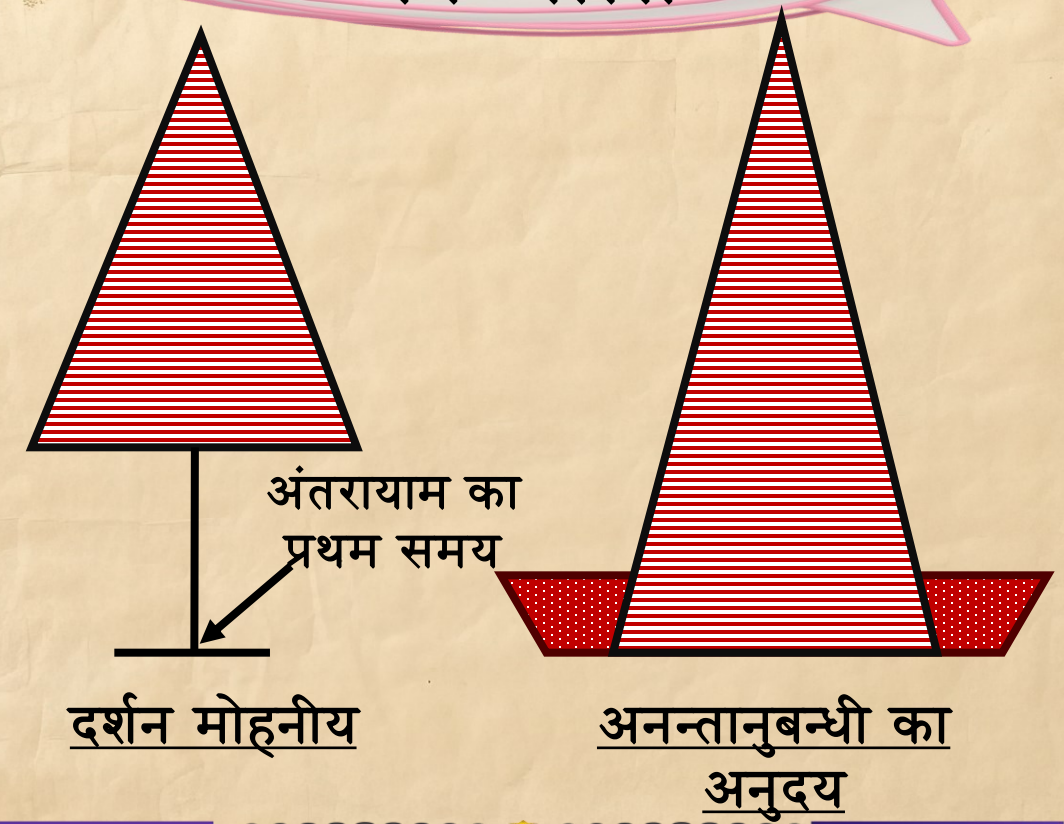

औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त होने पर दर्शन मोहनीय के स्थिति-अनुभागकांडकघात नहीं होते हैं ।

प्रथम स्थिति की अंतिम आवली समाप्त होने पर जीव अंतरायाम के प्रथम समय को प्राप्त करता है ।

इसी समय दर्शन मोहनीय कर्म का उपशम हो जाता है ।

साथ ही अनंतानुबंधी-4 का भी अनुदय प्रारंभ हो जाता है ।

इन सात कर्मों के उपशम से औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है ।

इसी जीव को प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि कहते हैं ।

यहाँ तत्त्वार्थश्रद्धान रूप सम्यक्त्व की प्राप्ति हुई है ।

मिथ्यात्व का गुणसंक्रमण

अंतरायाम के प्रथम समय को प्राप्त होने पर द्वितीय स्थिति में स्थित मिथ्यात्व के द्रव्य को गुणसंक्रमण भागहार द्वारा भाग देकर प्राप्त द्रव्य को तीन प्रकार का संक्रमित किया जाता है ।

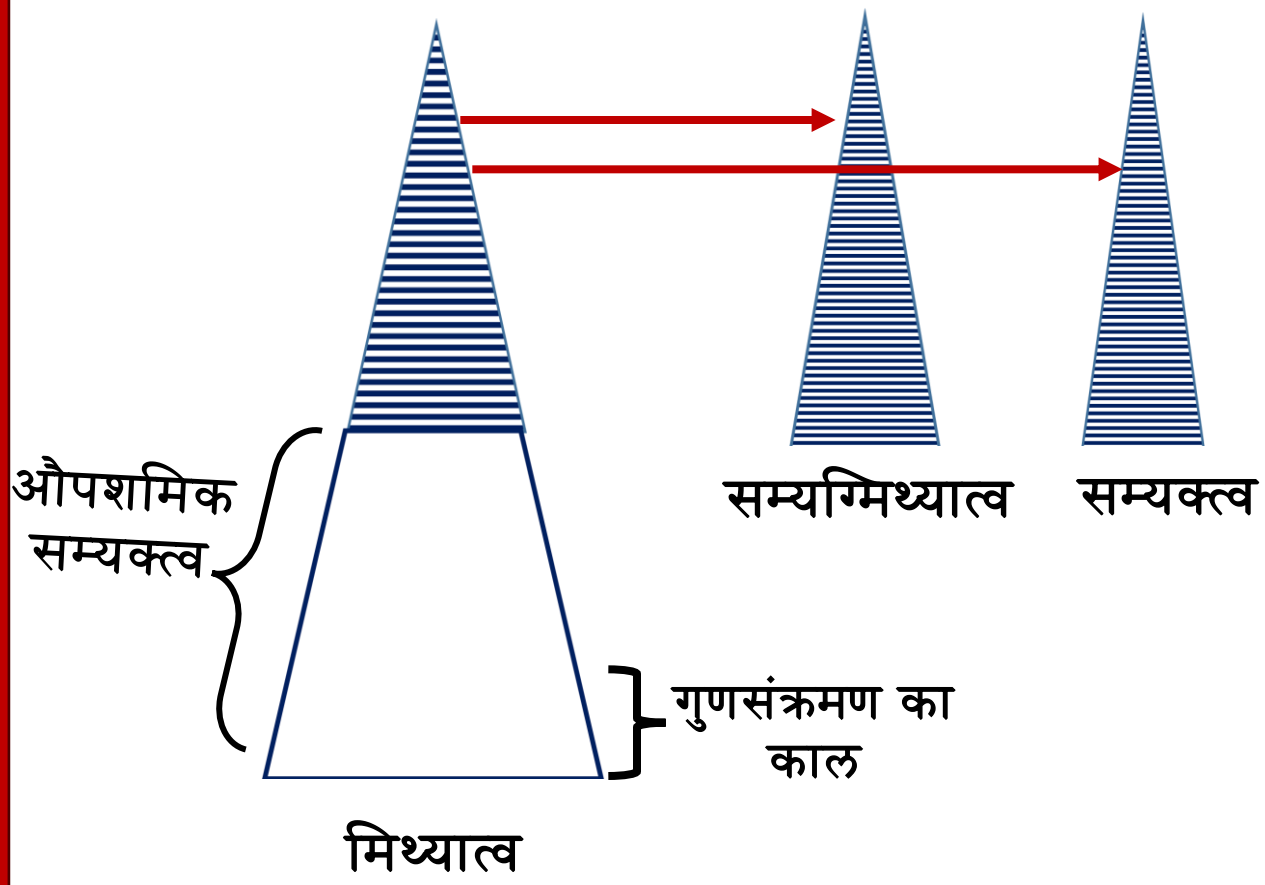

इस प्रकार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करते से ही मिथ्यात्व के टुकड़े होकर तीन भाग हो जाते हैं ।

यह गुणसंक्रमण प्रथमोपशम सम्यक्त्व के प्रारंभ के अंतर्मुहूर्त तक चलता है । उसके पश्चात् विध्यात संक्रमण होता है ।

मिच्छत्तमिस्ससम्मसरूवेण य तत्तिधा य दव्वादो । सत्तीदो य असंखाणंतेण य होंति भजियकमा ॥90॥

- अन्वयार्थ- (मिच्छत्तमिस्ससम्मसरूवेण य तत्तिधा) मिथ्यात्व, मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृतिरूप से उसके तीन प्रकार होते हैं ।
- (दव्वादो य सत्तीदो य असंखाणंतेण य भजियकमा होंति) वे क्रम से द्रव्य की अपेक्षा से असंख्यातवाँ भागमात्र और शक्ति की अपेक्षा से अनन्तवाँ भागमात्र है ॥90॥

www.JainKosh.org

मिथ्यात्व के गुणसंक्रमण का द्रव्य

मिथ्यात्व के द्रव्य को गुणसंक्रम भागहार से भाग लगाने पर एकभाग द्रव्य को मिश्र व सम्यक्त्व प्रकृतिरूप परिणमाता है । बहुभाग द्रव्य को मिथ्यात्वरूप ही रखता है ।

एकभाग द्रव्य में से असंख्यात बहुभाग द्रव्य मिश्र को एवं एक असंख्यातवाँ भाग सम्यक्त्व प्रकृति को देता है ।

मिथ्यात्व का द्रव्य

स ∂ १२ –
७ ख १७

स ∂ १२ – । (गु – 1) ७ ख १७ । गु	स ∂ १२ – ७ ख १७ । गु
तदवस्थ रहने वाला बहुभाग द्रव्य	मिश्र, सम्यक्त्वरूप परिणमने वाला एकभाग द्रव्य

www.JainKosh.org

मिश्र, सम्यक्त्व प्रकृति का द्रव्य

उपर्युक्त एकभाग द्रव्य
स ∂ १२ – । (∂ + 1)
७ ख १७ । गु । (∂ + 1)

(ऊपर-नीचे समान संख्या (∂ + 1) का गुणा किया है ।)

स ∂ १२ – । ∂
७ ख १७ । गु । (∂ + 1)

स ∂ १२ –
७ ख १७ । गु । (∂ + 1)

इस विभाजन से प्रकट हो रहा है कि मिथ्यात्व के द्रव्य से मिश्र का द्रव्य असंख्यात गुणा हीन है ।

मिश्र प्रकृति में परिणत असंख्यात बहुभाग द्रव्य

सम्यक्त्व प्रकृति में परिणत एकभाग द्रव्य

तथा मिश्र के द्रव्य से सम्यक्त्व का द्रव्य असंख्यात गुणा हीन है ।

www.JainKosh.org

मिथ्यात्व आदि के अनुभाग

अनुभाग की अपेक्षा मिथ्यात्व के अवशेष अनुभाग से मिश्र का अनुभाग अंनत गुणा हीन है । तथा

मिश्र के अनुभाग से सम्यक्त्व प्रकृति का अनुभाग अनंतगुणा हीन है ।

मिथ्यात्व का अनुभाग	कांडकघात होने से शेष अनुभाग	मिश्र का अनुभाग	सम्यक्त्व का अनुभाग
व ९ ना +3	$\frac{\text{व ९ ना}+3}{\text{ख}}$	$\frac{\text{व ९ ना}+3}{\text{ख ख}}$	$\frac{\text{व ९ ना}+3}{\text{ख ख ख}}$

पढमादो गुणसंकम-चरिमो त्ति य सम्ममिस्ससम्मिस्से । अहिगदिणाऽसंखगुणो, विज्झादो संकमो तत्तो ॥91॥

- अन्वयार्थ- प्रथमोपशम सम्यक्त्व के (पढमादो) प्रथम समय से लेकर (गुणसंकमचरिमो त्ति य) गुणसंक्रमण के अंतिम समय पर्यन्त (अहिगदिणा) सर्प की चाल से (असंखगुणो) असंख्यातगुणित मिथ्यात्व द्रव्य (सम्ममिस्ससम्मिस्से) सम्यक्त्व, मिश्र, पुनः सम्यक्त्व और मिश्र प्रकृतिरूप से परिणमता है । (तत्तो) उसके पश्चात् (विज्झादो संकमो) विध्यात संक्रमण होता है ॥91॥

www.JainKosh.org

यह गुणसंक्रमण प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होने से गुणसंक्रमण काल तक चलता है ।

प्रत्येक समय संक्रमित होने वाला द्रव्य असंख्यात गुणा-असंख्यात गुणा होता है ।

इससे सम्यक्त्व और मिश्र को प्राप्त होने वाला द्रव्य भी पूर्व से असंख्यात गुणा होता है ।

समय	सम्यक्त्व	मिश्र
प्रथम समय	स ∂ १२ – ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$	स ∂ १२ – । ∂ ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$
द्वितीय समय	स ∂ १२ – । $\partial\partial$ ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$	स ∂ १२ – । $\partial\partial\partial$ ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$
तृतीय समय	स ∂ १२ – । $\partial\partial\partial\partial$ ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$	स ∂ १२ – । $\partial\partial\partial\partial\partial$ ७ ख १७ । गु । $(\partial + 1)$

मिश्र, सम्यक्त्व का द्रव्य

इस प्रकार प्रथम समय के मिश्र द्रव्य से द्वितीय समय का सम्यक्त्व का द्रव्य असंख्यात गुणा है । उससे उसी समय मिश्र को प्राप्त द्रव्य असंख्यात गुणा है ।

द्वितीय समय में मिश्र को प्राप्त द्रव्य से तृतीय समय में सम्यक्त्व को प्राप्त द्रव्य असंख्यात गुणा है । उससे उसी समय मिश्र को प्राप्त द्रव्य असंख्यात गुणा है ।

इस प्रकार प्रत्येक समय में संक्रमित द्रव्य तथा मिश्र, सम्यक्त्व प्रकृति को प्राप्त द्रव्य असंख्यात गुणा होता है ।

गुणसंक्रमण के अंतिम समय कितना द्रव्य प्राप्त होता है ?

उदाहरण – माना कि गुणसंक्रमण 4 समय के लिए होता है ।

तो प्रत्येक समय में असंख्यात का गुणकार इस प्रकार होगा –

समय	सम्यक्त्व प्रकृति का गुणकार	मिश्र का गुणकार
4	6	7
3	4	5
2	2	3
1	0	1

सम्यक्त्व प्रकृति का गुणकार

- सम्यक्त्व प्रकृति का गुणकार लाने का सूत्र =
- {(पद – 2) × 2} + 2
- {(4–2) × 2} + 2
- (2 × 2) + 2 = 4 + 2 = 6
- संदृष्टि में : पद = अंतर्मुहूर्त = 2२
- {(2२ – 2) × 2 } + 2
- यही यहाँ असंख्यात का गुणकार है अर्थात् इतने बार असंख्यात को गुणा करने पर जो लब्ध प्राप्त हुआ है, उसे प्रथम समय के सम्यक्त्व के द्रव्य से गुणा करने पर अंतिम समय का सम्यक्त्व का द्रव्य होता है ।
- अंतिम समय में सम्यक्त्व प्रकृति को प्राप्त द्रव्य = $\frac{\text{स } \partial \text{ १२– । } \partial\{(2\text{२} - 2) \times 2\} + 2}{\text{७ ख १७ । गु । } (\partial + 1)}$

www.JainKosh.org

मिश्र प्रकृति का गुणकार

- मिश्र प्रकृति का गुणकार लाने हेतु सूत्र =
- {(पद – 1) × चय} + आदि
- {(4–1) × 2} + 1
- (3 × 2) + 1 = 6 + 1 = 7
- संदृष्टि में {(2२ – 1) × 2 } + 1
- यही यहाँ असंख्यात का गुणकार है । अतः अंतिम समय में मिश्र को प्राप्त द्रव्य =
- $\dfrac{\text{स ∂ १२ – । ∂ \{(2२ – 1) × 2 \} + 1}}{\text{७ ख १७ । गु । (∂ + 1)}}$

विध्यात संक्रमण

गुण संक्रम पूरण काल के पश्चात् विध्यात संक्रमण होता है ।

अभी भी प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही चल रहा है । परंतु मंद विशुद्धि के होने पर प्रवृत्त होने वाला विध्यात संक्रमण यहाँ पाया जाता है ।

इसका भागहार $\frac{\text{अंगुल}}{\text{संख्यात}}$ होने से अल्प द्रव्य ही मिश्र व सम्यक्त्व में संक्रमित होता है ।

www.JainKosh.org

विदियकरणादिमादो, गुणसंकमपूरणस्स कालो त्ति । वोच्छं रसखंडुक्कीरणकालादीणमप्पबहुं ॥92॥

- अन्वयार्थ- (विदियकरणादिमादो) दूसरे अपूर्वकरण के प्रथम समय से लेकर (गुणसंकमपूरणस्स कालो त्ति) गुणसंक्रमपूरणकाल पर्यंत (रसखंडुक्कीरणकालादीणं) अनुभाग-कांडकोत्करण-कालादि का (अप्पबहुं) अल्प-बहुत्व (वोच्छं) मैं कहूँगा ॥92॥

www.JainKosh.org

25 पदों का अल्प-बहुत्व

अपूर्वकरण के काल से अनेकों आवश्यक कार्य प्रारंभ होते हैं ।

उनमें से कुछ कार्यों, स्थितियों का आयाम अंतर्मुहूर्त है ।

वे अंतर्मुहूर्त कितने छोटे-बड़े हैं?, साथ ही स्थितिबंध, आबाधा, सत्त्व आदि का प्रमाण भी करणों के प्रारंभ में और अंत में कितना होता है – यह बताने के लिए 25 पदों का अल्पबहुत्व कहा जाता है ।

कब से कब तक का अल्प-बहुत्व कहा जा रहा है?

- अपूर्वकरण के प्रथम समय से लेकर गुणसंक्रम पूरण काल तक (जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल तक होता है) होने वाले कालों का अल्प-बहुत्व कहा जाता है ।

अंतिमरसखंडुक्कीरणकालादो दु पढमओ अहिओ। तत्तो संखेज्जगुणो, चरिमट्ठिदिखंडहदिकालो ॥93॥

- अन्वयार्थ- (अंतिमरसखंडुक्कीरणकालादो दु) अंतिम अनुभाग-कांडकोत्कीरणकाल से (पढमओ) प्रथम अनुभाग-कांडकोत्कीरणकाल (अहिओ) अधिक है ।
- (तत्तो) उससे (चरिमट्ठिदिखंडहदिकालो) अंतिम स्थितिकांडक-घातकाल (संखेज्जगुणो) संख्यात गुणा है ॥93॥

www.JainKosh.org

25 पदों का अल्पबहुत्व

1) दर्शन मोहनीय का अंतिम अनुभागकांडक प्रथम स्थिति के अंतिम समय समाप्त होता है । शेष कर्मों का अंतिम अनुभागकांडक गुणसंक्रमकाल के अंत समय में समाप्त होता है ।

इस अंतिम अनुभागकांडक का काल अंतर्मुहूर्त है । आगे बताए जाने वाले सब कालों से सबसे छोटा (स्तोक) है ।

2) उससे अपूर्वकरण के प्रथम समय में प्रारंभ किया गया अनुभागकांडक का काल विशेष अधिक है । पूर्व के काल से संख्यात भाग अधिक है ।

25 पदों का अल्पबहुत्व

3) स्थितिकांडकोत्कीरण काल संख्यात गुणा है क्योंकि एक स्थितिकांडकघात में हजारों अनुभागकांडकघात हो जाते हैं ।

4) इतना ही काल अंतिम स्थितिबंध का है क्योंकि स्थितिबंध एवं स्थितिकांडकोत्कीरण का काल समान है ।

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	अल्प-बहुत्व	काल	संदृष्टि
1	अंतिम अनुभाग-कांडकोत्कीरण काल	स्तोक	अंतर्मुहूर्त	2२
2	प्रथम अनुभाग-कांडकोत्कीरण काल	विशेष अधिक	अंतर्मुहूर्त	2२ । ५ ४
3	अंतिम स्थितिबंध	संख्यात गुणा	अंतर्मुहूर्त	2२ । ५ । ४ ४
4	अंतिम स्थिति-कांडकोत्कीरण काल		अंतर्मुहूर्त	

मिथ्यात्व का अंतिम स्थितिकांडकोत्कीरण प्रथम स्थिति के अंतिम समय समाप्त होता है और

शेष कर्मों का गुणसंक्रम काल के अंतिम समय समाप्त होता है ।

तत्तो पढमो अहिओ, पूरणगुणसेढिसीसपढमठिदी ।
संखेण य गुणियकमा, उवसमगद्धा विसेसहिया ॥94॥

- अन्वयार्थ- (तत्तो) उससे (अंतिम स्थिति-कांडकोत्कीरणकाल की अपेक्षा) (पढमो) प्रथम स्थिति-कांडकोत्कीरणकाल (अहिओ) अधिक है।
- उससे (पूरणगुणसेढिसीसपढमठिदी) गुणसंक्रमण पूरणकाल, गुणश्रेणिशीर्ष व प्रथम स्थिति (संखेण य गुणियकमा) क्रम से संख्यात गुणित हैं ।
- उससे (उवसमगद्धा) उपशम-करण काल (विसेसहिया) विशेष अधिक है ॥94॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

5) अंतिम स्थितिबंध व स्थितिकांडक काल से अंतरकरण करने का काल विशेष अधिक है । क्योंकि यह मध्य का स्थितिकांडक जितना काल है । पूर्व के काल का संख्यातवाँ भाग अधिक है ।

6) इतना ही उस काल पाये जाने वाले स्थितिबंध का काल है ।

7) पूर्वोक्त अंतर्मुहूर्त प्रमाण काल से प्रथम स्थितिकांडक का काल विशेष अधिक है । पूर्व के काल का संख्यातवाँ भाग अधिक है ।

8) इतना ही काल उसी समय पाये जाने वाले स्थितिबंध का है ।

अल्प-बहुत्व

9) उससे गुणसंक्रमणपूरण काल संख्यात गुणा है ।

10) उससे गुणश्रेणी शीर्ष संख्यात गुणा है । (जो अनिवृत्तिकरण का संख्यातवाँ भाग अधिक करके गुणश्रेणी आयाम बताया था, वही गुणश्रेणी शीर्ष कहलाता है ।)

11) उससे प्रथम स्थिति का आयाम संख्यात गुणा है ।

12) उससे दर्शन-मोहनीय को उपशमाने का काल विशेष अधिक है ।

प्रश्न- जितना प्रथम स्थिति का प्रमाण है, उतना ही दर्शनमोह को उपशमाने का काल है । फिर उसे विशेष अधिक क्यों कहा है ?

उत्तर- जो प्रथम स्थिति का काल है उतना तो दर्शनमोह उपशमाने का काल है ही ।

परंतु प्रथम स्थिति की अंतिम 2 आवलियों में जो नया मिथ्यात्व का बंध हुआ है, उसे उपशमाने में प्रथम स्थिति के बाद भी कुछ समय लगता है ।

इसलिए प्रथम स्थिति के काल से उपशमन का काल विशेष अधिक है । विशेष का प्रमाण (2 आवली – 1) समय है ।

अल्प-बहुत्व

क्रमांक	पद	अल्पबहुत्व	काल	संदृष्टि
5	अंतरकरण का काल	विशेष अधिक	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५ ४ ४
6	उसी समय का स्थितिबंध का काल		अंतर्मुहूर्त	2२ ५४ ५ ४ ४
7	प्रथम स्थितिकांडकोत्कीरण काल	विशेष अधिक	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५ ४४४
8	उसी समय का स्थितिबंध का काल		अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५ ४४४
9	गुणसंक्रम पूरण काल	संख्यात गुणा	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५४ ४४४
10	गुणश्रेणी शीर्ष	संख्यात गुणा	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५४४ ४४४
11	प्रथम स्थिति का आयाम	संख्यात गुणा	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५४४४ ४४४
12	दर्शन मोह का उपशमाने का काल	अधिक	अंतर्मुहूर्त	2२ ५४५५ ४४४ + (४ | 2 − 1) ४४४

www.JainKosh.org

अणियट्टी संखगुणो, णियट्टिगुणसेढियायदं सिद्धं । उवसंतद्धा अंतर, अवरवराबाह संखगुणियकमा ॥95॥

- अन्वयार्थ- (अणियट्टी संखगुणो) अनिवृत्तिकरण का काल संख्यात-गुणा है।
- उससे (णियट्टिगुणसेढियायदं सिद्धं) अपूर्वकरण का काल संख्यात-गुणा है। उससे गुणश्रेणी आयाम विशेष अधिक है – यह बात सिद्ध है।
- गुणश्रेणी आयाम से (उवसंतद्धा) उपशम सम्यक्त्व का काल, (अंतर) अंतरायाम, (अवरवराबाह) जघन्य आबाधा और उत्कृष्ट आबाधा (संखगुणियकमा) क्रम से संख्यात गुणित है ॥95॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

13) उससे अनिवृत्तिकरण का काल संख्यात गुणा है ।

14) उससे अपूर्वकरण का काल संख्यात गुणा है ।

15) उससे गुणश्रेणी का आयाम विशेष अधिक है ।

- क्योंकि गुणश्रेणी का आयाम = अपूर्वकरण काल + अनिवृत्तिकरण काल + $\frac{\text{अनिवृत्तिकरण}}{\text{संख्यात}}$ कहा था ।

16) उससे उपशम सम्यग्दर्शन का काल संख्यात गुणा है ।

www.jainkosh.org

अल्प-बहुत्व

17) उससे अंतरायाम संख्यात गुणा है ।

18) उससे मिथ्यात्व की जघन्य आबाधा संख्यात गुणी है ।

- यह जघन्य आबाधा मिथ्यात्व का अंतिम बंध करते समय पायी जाती है । मिथ्यात्व का अंतिम बंध प्रथम स्थिति के अंतिम समय में पाया जाता है ।
- शेष कर्मों का जघन्य स्थितिबंध गुणसंक्रमकाल के चरम समय में होता है । वहीं उनकी आबाधा जघन्य पायी जाती है ।

19) उससे मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा संख्यात गुणी है । क्योंकि मिथ्यात्व के जघन्य बंध से उत्कृष्ट बंध संख्यात गुणा है । बंध के अनुसार ही आबाधा होती है ।

- यह अपूर्वकरण के प्रथम स्थितिबंध के समय होती है ।

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

<table>
<tr><th>क्रमांक</th><th>पद</th><th>अल्पबहुत्व</th><th>काल</th><th>संदृष्टि</th></tr>
<tr><td>13</td><td>अनिवृत्तिकरण का काल</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२</td></tr>
<tr><td>14</td><td>अपूर्वकरण का काल</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२२</td></tr>
<tr><td>15</td><td>गुणश्रेणी आयाम</td><td>विशेष अधिक</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२ | ४ × (२ + 1) + 1
४</td></tr>
<tr><td>16</td><td>उपशम सम्यक्त्व काल</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२ | ४ × (२ + 1) + 1 | ४
४</td></tr>
<tr><td>17</td><td>अंतरायाम का काल</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२ | ४ × (२ + 1) + 1 | ४ ४
४</td></tr>
<tr><td>18</td><td>जघन्य आबाधा</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२ | ४ × (२ + 1) + 1 | ४ ४ ४
४</td></tr>
<tr><td>19</td><td>उत्कृष्ट आबाधा</td><td>संख्यात गुणा</td><td>अंतर्मुहूर्त</td><td>2२ | ४ × (२ + 1) + 1 | ४ ४ ४ ४
४</td></tr>
</table>

यहाँ तक के सारे पद अंतर्मुहूर्त प्रमाण हैं । इसके आगे के पद पल्य/संख्यात भाग आदि हैं ।

संदृष्टि का विवरण

अनिवृत्तिकरण का काल = 2 २ ५ ४ ५ ५ ४ ४ ४ ४ + (४ | 2 – 1)
४ ४ ४

यहाँ यथायोग्य अपर्वतन और गुणा करके काल की संदृष्टि 2 २ है क्योंकि यह सब अंतर्मुहूर्त काल ही है ।

गुणश्रेणी आयाम की संदृष्टि = अपूर्वकरण काल + अनिवृत्तिकरण काल + अनिवृत्तिकरण / संख्यात = 2 २२ + 2 २ + 2 २
४

= 2 २ × (२ + 1) + 2 २
४
(2 २ कॉमन लेने पर)

= 2 २ × (२ + 1) × ४ + 2 २
४ ४
(4 से समच्छेद करने पर)

= 2 २ × {(४ × (२ + 1) + 1}
४
(2 २ कॉमन लेने पर)

पढमापुव्वजहण्णट्ठिदिखंडमसंखसंगुणं तस्स ।
अवरवरट्ठिदिबंधा, तट्ठिदिसत्ता य संखगुणियकमा ॥96॥

- अन्वयार्थ- उत्कृष्ट आबाधा की अपेक्षा (पढमापुव्वजहण्णट्ठिदिखंडं असंखसंगुणं) अपूर्वकरण के प्रथम समय में होने वाला जघन्य स्थितिकांडक असंख्यात गुणित है।
- (तस्स) उससे (अवरवरट्ठिदिबंधा) जघन्य स्थितिबंध, उत्कृष्ट स्थितिबंध (तट्ठिदिसत्ता य) जघन्य स्थितिसत्त्व और उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व – ये पद (संखगुणियकमा) क्रम से संख्यातगुणे हैं ॥96॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

20) उत्कृष्ट आबाधा से अंतिम स्थितिखंड का प्रमाण असंख्यात गुणा है । क्योंकि अंतिम स्थितिखंड भी $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ प्रमाण है ।

- यह अंतिम स्थितिखंड अंतिम स्थितिकांडकघात के द्वारा ग्रहण किया हुआ आयाम है ।

21) अपूर्वकरण के प्रथम समय में उत्कृष्ट स्थितिखंड संख्यात गुणा है क्योंकि वह सागरोपम पृथक्त्व प्रमाण है ।

22) जघन्य स्थिति-बंध संख्यात गुणा है ।

- मिथ्यात्व का जघन्य स्थिति-बंध प्रथम स्थिति के अंतिम स्थितिबंध काल में होता है ।
- शेष कर्मों का जघन्य स्थिति-बंध गुणसंक्रम के अंतिम स्थितिबंध काल में होता है ।

अल्प-बहुत्व

23) उससे उत्कृष्ट स्थिति-बंध संख्यात गुणा है ।

- यह अपूर्वकरण के प्रथम स्थिति-बंध काल में होता है ।

24) उससे जघन्य स्थिति-सत्त्व संख्यात गुणा है ।

- मिथ्यात्व का जघन्य स्थिति-सत्त्व प्रथम स्थिति के चरम समय में होता है ।
- शेष कर्मों का जघन्य स्थिति-सत्त्व गुणसंक्रम काल के अंतिम समय होता है ।

25) उससे उत्कृष्ट स्थिति-सत्त्व संख्यात गुणा है ।

- यह अपूर्वकरण के प्रथम समय में पाया जाता है ।

अल्पबहुत्व

क्रमांक	पद	अल्पबहुत्व	प्रमाण	संदृष्टि
20	अंतिम स्थिति खंड	असंख्यात गुणा	$\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$	$\frac{\text{प}}{\text{२}}$
21	उत्कृष्ट स्थिति खंड	संख्यात गुणा	सागरोपम पृथक्त्व	सा 7 8
22	जघन्य स्थिति-बंध	संख्यात गुणा	अंत:कोटाकोटी सागर	सा अं को 2 ४ ४ ४
23	उत्कृष्ट स्थिति-बंध	संख्यात गुणा	अंत:कोटाकोटी सागर	सा अं को 2 ४ ४
24	जघन्य स्थिति-सत्त्व	संख्यात गुणा	अंत:कोटाकोटी सागर	सा अं को 2 ४
25	उत्कृष्ट स्थिति-सत्त्व	संख्यात गुणा	अंत:कोटाकोटी सागर	सा अं को 2

अल्पबहुत्व

इनमें 5 स्थान अधिकरूप हैं ।

इनमें 15 स्थान संख्यात गुणा हैं ।

इनमें 1 स्थान असंख्यात गुणा हैं ।

इनमें 3 स्थान समानरूप हैं । अतः पूर्वोक्त में ही शामिल हैं ।

इनमें 1 स्थान (प्रथम) सबसे अल्प है ।

इस प्रकार 25 स्थान कहे हैं ।

www.JainKosh.org

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889

- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें ।